All Subject to Patiala Jurisdiction.

साप्ताहिक कृषि समाचार-पत्र

खेती संदेश

मूल्य : 6/- रुपए

Postage Registered No. PB/PTA/0339/2025-2027

WEEKLY KHETI SANDESH

E-mail : khetisandesh2025@gmail.com

Chief Editor : Parminder Kaur • RNI Regd. No. PBBIL/25/A0210 • Issue Dt. 02-02-2026 • Vol.2 No.05 • H.O. : # 9-A, Ajit Nagar, Patiala-147001 (Pb.) • Mob. 90410-14575 • Page 12

जनवरी में हुई तीसरी बारिश फसलों के लिए वरदान

ओलावृष्टि वाले इलाकों में सरसों को नुकसान की आशंका

जनवरी माह में हुई तीसरी बारिश रबी फसलों के लिए वरदान साबित होगी। इससे गेहूं, सरसों और चना की फसल को सबसे अधिक लाभ मिलने की उम्मीद है। हालांकि कुछ जिलों में हुई हल्की ओलावृष्टि से सरसों की फसल को नुकसान की आशंका जताई जा रही है। वहीं यदि बारिश और नमी वाला मौसम लंबे समय तक बना रहा, तो गेहूं में पीला रतुआ रोग का खतरा बढ़ सकता है।

चौधरी चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय (एचएयू) के मौसम विभाग के वैज्ञानिक डॉ. चंद्रशेखर डागर ने बताया कि जनवरी माह में इससे पहले भी दो बार बारिश हो चुकी है। पहली बारिश माह की शुरुआत में और दूसरी 23 जनवरी को हुई थी, जिससे फसलों को लाभ मिला। जनवरी के पहले दो दिनों में 16.8 मिमी बारिश दर्ज की गई थी। आगामी दिनों में पश्चिमी विक्षोभ के सक्रिय होने और बारिश की संभावना फिलहाल बेहद कम है।

एचएयू के गेहूं विभाग के वरिष्ठ वैज्ञानिक डॉ. ओपी बिश्नोई ने बताया कि इस समय गेहूं में बाली नहीं निकली है और लंबे समय तक ठंड का बना रहना पैदावार के लिए लाभकारी होता है। जनवरी में हुई अच्छी बारिश का सकारात्मक असर गेहूं की पैदावार पर दिखाई देगा। उन्होंने कहा कि दिसंबर माह में बारिश नहीं होने के कारण गेहूं को नुकसान की आशंका बन रही थी, जिसे जनवरी की बारिश ने काफी हद तक पूरा कर दिया है। बारिश से गेहूं, चना और सरसों सहित सभी रबी फसलों को फायदा होगा।

डॉ. बिश्नोई ने बताया कि कुछ क्षेत्रों से ओलावृष्टि की रिपोर्ट भी सामने आई है। वर्तमान अवस्था में ओलावृष्टि से गेहूं को नुकसान नहीं होता, लेकिन सरसों की फसल में इस समय फलियों में दाना बन चुका है। तेज ओलावृष्टि होने की स्थिति में सरसों को नुकसान हो सकता है।

पंजाब के लुधियाना नज़दीक गांव में खेत में से पानी निकालता हुआ किसान।

ऐसा मौसम लंबा चला तो पीला रतुआ की आशंका

डॉ. ओपी बिश्नोई ने बताया कि यदि बारिश और नमी वाला मौसम लंबे समय तक बना रहा, तो गेहूं में पीला रतुआ रोग की आशंका बढ़ जाती है। इसका असर हिमाचल प्रदेश से सटे जिलों में अधिक देखने को मिलता है। उन्होंने बताया कि एचएयू द्वारा विकसित नई किस्मों में पीला रतुआ नहीं आता है, लेकिन जिन किसानों ने पुरानी किस्मों की बुवाई की है, उन्हें विशेष सतर्कता बरतनी चाहिए।

जिला उद्यान अधिकारी डॉ. कुलदीप श्योराण ने बताया कि बारिश से सामान्य तौर पर सब्जियों को नुकसान नहीं होता है। जिन क्षेत्रों में ओलावृष्टि हुई है, वहां कुछ नुकसान की संभावना है, लेकिन अभी फील्ड से पूरी रिपोर्ट नहीं मिली है। उन्होंने बताया कि गाजर, मूली और पालक जैसी सब्जियों पर असर कम रहेगा, जबकि टमाटर, मिर्च, बैंगन और गोभी की फसल को अधिक नुकसान हो सकता है।

देशभर में 35 मिलियन हैक्टेयर से अधिक में गेहूं की बुवाई, 119 मिलियन टन उत्पादन का लक्ष्य

कृषि विशेषज्ञ बोले – मौसम अनुकूल, रिकॉर्ड तोड़ होगा उत्पादन

देश में 35 मिलियन हैक्टेयर से भी ज्यादा रकबे में गेहूं की बुवाई हुई है, जो उत्साहित करने वाला आंकड़ा है। पिछले सालों की अपेक्षा देश में इस बार गेहूं का रकबा बढ़ा है, गेहूं के क्षेत्रफल में बढ़ोत्तरी को देखकर और गेहूं की फसल के लिए अनुकूल मौसम के चलते भारत सरकार द्वारा निर्धारित 119 टन गेहूं उत्पादन का लक्ष्य

हासिल कर लिया जाएगा।

भारतीय गेहूं एवं जौं अनुसंधान संस्थान करनाल के निदेशक डॉ. रतन तिवारी ने बताया कि कुछ किसानों ने अक्तूबर तो ज्यादातर किसान भाईयों ने नवंबर में गेहूं की बुवाई की थी, इस वक्त जो मौसम चल रहा है, मौसम गेहूं की फसल को पसंद है अर्थात् गेहूं को ठंड पसंद है। बारिश हुई है और ठंड पड़ रही है, जो बताता है कि हम रिकॉर्ड तोड़ उत्पादन की ओर बढ़ रहे हैं। उन्होंने कहा कि ओलावृष्टि से किसान भाईयों को घबराने की जरूरत नहीं है, क्योंकि ओलावृष्टि का नुकसान उस वक्त होता है, जब गेहूं में बालियां निकल जाएं और बालियां में दाना भर जाए, लेकिन फिलहाल अभी ऐसी संभावना नहीं है। ओलावृष्टि से जो नुकसान हुआ भी है, उसे फसल अपने आप रिकवर कर लेगी। भारत सरकार ने जो लक्ष्य निर्धारित किया है, उसे किसान भाईयों की मदद से हासिल कर लिया जाएगा।

निदेशक डॉ. तिवारी ने किसानों से कहा कि वे लगातार खेतों का निरीक्षण करते रहे, अगर फसल में जलभराव होता है, तो उसे निकालने का प्रयास करें। अगर जलभराव के चलते फसल में पीलापन आता है, तो उस पर ध्यान रखें। संस्थान के वैज्ञानिकों से सम्पर्क करें, जिससे समय रहते हर समस्या का समाधान हो सके। उन्होंने कहा कि मौसम में बदलाव चल रहा है, उस पर नज़र बनाएं रखें।

अमेरिका : जब शहर की सड़कों से गुजरते हैं लंबे सींगों वाले बैल

अमेरिका के डेनवर में नेशनल वेस्टर्न स्टॉक शो की शुरूआत एक खास और ऐतिहासिक परम्परा के साथ होती है। ओपनिंग परेड के दौरान शहर की सड़कों से लॉन्गहॉर्न स्टीयर यानी लंबे सींगों वाले बैलों को हांका जाता है। यह परेड अमेरिका की पुरानी कैटल ड्राइव परंपरा की याद दिलाती है, जब 19वीं सदी में टेक्सास और आस-पास के इलाकों से लाखों मवेशियों को चरवाहे पैदल और घोड़ों पर बैठ कर बाज़ारों और रेलहेड्स तक ले जाया करते थे। उस दौर में लॉन्गहॉर्न नस्ल का खास महत्व था। ये मवेशी मज़बूत और सहनशील होते थे, इसलिए लंबी यात्राओं के लिए सबसे उपयुक्त माने जाते थे। परेड में असली लॉन्गहॉर्न स्टीयर, काउबॉय पोशाक में सजे चरवाहे, घोड़े और पारम्परिक वेस्टर्न संगीत शामिल होता है।

पहले के समय में किसान पारंपरिक तरीकों से कीट नियंत्रण करते थे, जैसे हाथ से दवा छिड़कना या घरेलू उपाय अपनाना। लेकिन जैसे-जैसे खेती आधुनिक हुई, वैसे-वैसे स्प्रे मशीनों का उपयोग बढ़ता गया। इन मशीनों की मदद से कीटनाशक, फफूंदनाशक और तरल खाद को फसलों पर समान रूप से छिड़का जाता है, जिससे कीटों पर प्रभावी नियंत्रण संभव होता है।

फसल को कीटों से बचाने के लिए उपयोग होने वाली विभिन्न स्प्रे मशीनें

अजीत सिंह, सहायक प्रोफेसर (कृषि इंजीनियरिंग), चौधरी चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय कृषि महाविद्यालय, कौल (कैथल); **निशा चौधरी**, पीएचडी स्कोलर (कंप्यूटर विज्ञान और इंजीनियरिंग), गुरु जम्भेश्वर विज्ञान और प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, हिसार; **अनिल कुमार**, इंस्ट्रूमेंटेशन एवं नियंत्रण अभियांत्रिकी विभाग, जी.बी.एन. सरकारी पॉलिटेक्निक निलोखेड़ी, करनाल

भारत एक कृषि प्रधान देश है, जहां की एक बड़ी आबादी अपनी आजीविका के लिए खेती पर निर्भर है। किसान दिन-रात मेहनत करके फसल उगाता है, लेकिन उसकी यह मेहनत कई बार कीट-पतंगों, रोगों और खरपतवारों के कारण बर्बाद हो जाती है। कीट फसलों को नुकसान पहुंचाकर उत्पादन और गुणवत्ता दोनों को कम कर देते हैं।

पहले के समय में किसान पारंपरिक तरीकों से कीट नियंत्रण करते थे, जैसे हाथ से दवा छिड़कना या घरेलू उपाय अपनाना। लेकिन जैसे-जैसे खेती आधुनिक हुई, वैसे-वैसे स्प्रे मशीनों का उपयोग बढ़ता गया। इन मशीनों की मदद से कीटनाशक, फफूंदनाशक और तरल खाद को फसलों पर समान रूप से छिड़का जाता है, जिससे कीटों पर प्रभावी नियंत्रण संभव होता है।

आज बाजार में छोटे, मध्यम और बड़े किसानों की जरूरतों के अनुसार कई प्रकार की स्प्रे मशीनें उपलब्ध हैं। सही मशीन का चुनाव करने से न केवल समय और मेहनत बचती है, बल्कि दवा की सही मात्रा का उपयोग भी होता है, जिससे लागत कम होती है और फसल सुरक्षित रहती है।

स्प्रे मशीनों का महत्व

फसलों की सुरक्षा के लिए स्प्रे मशीनों का बहुत अधिक महत्व है। ये मशीनें कीटनाशक दवाओं को पौधों की पत्तियों, तनों और जड़ों तक समान रूप से पहुंचाने में मदद करती हैं। हाथ से छिड़काव करने पर दवा असमान रूप से गिरती है, लेकिन मशीनों से छिड़काव करने पर हर पौधे को समान सुरक्षा मिलती है।

स्प्रे मशीनों के उपयोग से किसान का समय और श्रम दोनों बचते हैं। बड़े खेतों में कम समय में छिड़काव पूरा हो जाता है, जिससे किसान अन्य कृषि कार्यों पर ध्यान दे सकता है। इसके अलावा, सही मात्रा में दवा का उपयोग होने से पर्यावरण पर भी कम नकारात्मक प्रभाव पड़ता है।

आज के समय में जब खेती की लागत बढ़ रही है, स्प्रे मशीनें किसानों के लिए एक उपयोगी और आवश्यक साधन बन चुकी हैं। ये मशीनें फसल उत्पादन बढ़ाने और किसान की आय में सुधार करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं।

फसल सुरक्षा के लिए उपयोगी स्प्रे मशीनें और उनके लाभ

खेती में फसल की सुरक्षा उतनी ही महत्वपूर्ण है जितनी कि बीज बोना, सिंचाई करना और खाद देना। जब किसान पूरी मेहनत से फसल तैयार करता है, तब कीट-पतंगे, रोग और फफूंद उस फसल को नुकसान पहुंचाने लगते है। ये कीट पत्तियों को खा जाते है, तनों को कमजोर कर देते है और कई बार पूरी फसल को नष्ट कर देते है। ऐसी स्थिति में किसान को भारी आर्थिक नुकसान उठाना पड़ता है। फसल को इन हानिकारक कीटों और रोगों से बचाने के लिए स्प्रे मशीनों का उपयोग अत्यंत आवश्यक हो गया है।

स्प्रे मशीनें वे कृषि यंत्र हैं जिनकी सहायता से कीटनाशक, रोगनाशक, फफूंदनाशक तथा तरल उर्वरकों को फसल पर समान रूप से छिड़का जाता है। पहले के समय में किसान पत्तों पर हाथ से दवा डालते थे, जिससे दवा सही तरीके से नहीं फैल पाती थी। आधुनिक स्प्रे मशीनों ने इस समस्या को काफी हद तक दूर कर दिया है। आज ये मशीनें खेती को आसान, सुरक्षित और अधिक लाभदायक बना रही हैं।

हाथ से चलने वाली स्प्रे मशीन और उसके लाभ

हाथ से चलने वाली स्प्रे मशीन सबसे सरल और सामान्य प्रकार की मशीन होती है। इसका उपयोग छोटे किसान, बागवानी करने वाले लोग और घरेलू खेती में अधिक करते हैं। इस मशीन में एक छोटा टैंक होता है जिसमें दवा भरी जाती है और हाथ से दबाव बनाकर छिड़काव किया जाता है। यह मशीन कम लागत वाली होती है और आसानी से कहीं भी ले जाई जा सकती है।

इस मशीन का सबसे बड़ा लाभ यह है कि यह छोटे खेतों और सीमित क्षेत्र के लिए बहुत उपयुक्त होती है। सब्जियों की खेती, फूलों के पौधों और नर्सरी में इसका उपयोग बहुत लाभकारी सिद्ध होता है। इसके माध्यम से किसान कम मात्रा में दवा का सही उपयोग कर सकता है, जिससे दवा की बर्बादी नहीं होती और फसल सुरक्षित रहती है।

नैपसेक स्प्रेयर (पीठ पर टांगने वाली मशीन)

नैपसेक स्प्रेयर किसानों के बीच सबसे अधिक लोकप्रिय स्प्रे मशीनों में से एक है। इसे किसान अपनी पीठ पर टांगकर खेत में चलता है और लीवर की सहायता से दवा का छिड़काव करता है। यह मशीन मध्यम आकार के खेतों के लिए बहुत उपयुक्त मानी जाती है।

इस मशीन का लाभ यह है कि इससे दवा का छिड़काव समान रूप से होता है। किसान आसानी से पौधों की पत्तियों के ऊपर और नीचे दोनों ओर दवा पहुंचा सकता है। यह मशीन मजबूत होती है और लंबे समय तक उपयोग की जा सकती है। छोटे और मध्यम किसानों के लिए यह एक किफायती और प्रभावी विकल्प है।

बैटरी चालित स्प्रे मशीन

बैटरी चालित स्प्रे मशीन आधुनिक तकनीक का एक अच्छा उदाहरण है। इस मशीन में बैटरी लगी होती है, जिससे किसान को हाथ से पंप चलाने की आवश्यकता नहीं होती। जैसे ही मशीन चालू की जाती है, मोटर अपने आप दवा को छिड़कती है।

इस मशीन का सबसे बड़ा लाभ यह है कि इससे किसान की शारीरिक मेहनत बहुत कम हो जाती है। लंबे समय तक छिड़काव करने पर भी थकान नहीं होती। बड़े खेतों में यह मशीन समय की बचत करती है और दवा का छिड़काव अधिक प्रभावी ढंग से होता है। आजकल युवा किसान इस मशीन को अधिक पसंद कर रहे हैं।

पावर स्प्रेयर और उसके लाभ

पावर स्प्रेयर पेट्रोल या डीजल इंजन से चलने वाली मशीन होती है। इसका उपयोग बड़े खेतों और व्यावसायिक खेती में किया जाता है। यह मशीन तेज दबाव से दवा को छिड़कती है, जिससे ऊंचे पेड़ों और घनी फसलों तक भी दवा आसानी से पहुंच जाती है।

इस मशीन का लाभ यह है कि यह कम समय में बड़े क्षेत्र को कवर कर लेती है। फलदार बागानों, कपास, गन्ना और धान जैसी फसलों में इसका उपयोग बहुत लाभकारी होता है। इससे श्रम लागत कम होती है और उत्पादन में वृद्धि होती है।

ट्रैक्टर चालित स्प्रे मशीन

ट्रैक्टर चालित स्प्रे मशीन बड़े किसानों और ठेके पर खेती करने वालों के लिए बहुत उपयोगी होती है। इसे ट्रैक्टर के पीछे जोड़ा जाता है और बड़े खेतों में एक साथ छिड़काव किया जाता है।

इस मशीन का प्रमुख लाभ यह है कि इससे बहुत बड़े क्षेत्र में कम समय में छिड़काव किया जा सकता है। दवा का वितरण समान रूप से होता है और मानव श्रम की आवश्यकता बहुत कम पड़ती है। व्यावसायिक खेती में यह मशीन अत्यंत लाभकारी सिद्ध होती है।

ड्रोन स्प्रे मशीन (आधुनिक तकनीक)

आज के समय में ड्रोन स्प्रे मशीन भी कृषि क्षेत्र में तेजी से लोकप्रिय हो रही है। यह मशीन हवा में उड़कर फसल पर दवा का छिड़काव करती है।

ड्रोन का उपयोग करने से कठिन और दलदली क्षेत्रों में भी छिड़काव संभव हो जाता है। इससे समय, दवा और पानी की बचत होती है। हालांकि इसकी लागत अधिक है, लेकिन भविष्य में यह तकनीक खेती को पूरी तरह बदल सकती है।

स्प्रे मशीनों के समग्र लाभ

स्प्रे मशीनों के उपयोग से फसल की गुणवत्ता और उत्पादन दोनों में सुधार होता है। कीट नियंत्रण समय पर होने से फसल सुरक्षित रहती है। किसान को कम नुकसान उठाना पड़ता है और उसकी आय में वृद्धि होती है।

इन मशीनों से दवा का सही और संतुलित उपयोग होता है, जिससे पर्यावरण पर भी कम दुष्प्रभाव पड़ता है। आधुनिक स्प्रे मशीनें खेती को आसान, सुरक्षित और टिकाऊ बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रही हैं।

निष्कर्ष

फसल सुरक्षा के लिए स्प्रे मशीनें आज की आधुनिक खेती का एक अनिवार्य हिस्सा बन चुकी है। छोटे किसान से लेकर बड़े किसान तक, सभी के लिए अलग-अलग प्रकार की स्प्रे मशीनें उपलब्ध हैं। सही मशीन का चुनाव करके किसान अपनी फसल को कीटों और रोगों से सुरक्षित रख सकता है और बेहतर उत्पादन प्राप्त कर सकता है।

सरसों के प्रमुख रोगों का प्रबंधन

सरसों एवं तोरिया भारत की प्रमुख तिलहनी फसलें हैं। मूंगफली के बाद क्षेत्रफल व उत्पादन की दृष्टि से ये दूसरे स्थान पर हैं। इस समूह की फसलें हमारे देश की तिलहन अर्थव्यवस्था में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं। सरसों एवं तोरिया की उपज को बढ़ाने तथा उसे टिकाऊ बनाने के मार्ग में एक प्रमुख रोगों का प्रकोप है। फसलों के कम व अस्थिर उत्पादन के लिए भी रोग ही उत्तरदाई है।

सामान्य आकलन के अनुसार विभिनन रोगों के आक्रमण से सरसों एवं तोरिया की फसलों की उपज में प्रतिवर्ष लगभग 10 से 20 प्रतिशत की हानि होती है। प्रस्तुत लेख में सरसों की फसल में लगने वाले प्रमुख रोगों के लक्षण एवं उनके प्रबंधन के बारे में जानकारी दी जा रही है।

सफेद रोली रोग (सफेद रतुआ/श्वेत किट्ट)

रोग लक्षण :- इस रोग से ग्रस्ति पौधों की पत्तियों की निचली सतह पर 1-2 मि.मी. व्यास के स्वच्छ व सफेद रंग के छोटे-छोटे फफोले (धब्बे) बन जाते हैं। ये बाद में आपस में मिलकर अनियमित

आकार के हो जाते है। इन फफोलों के ठीक ऊपर पत्ती की ऊपरी सतह पर गहरे भूरे/कत्थई रंग के धब्बे दिखने लगते हैं। इनकी अतिवृद्धि के कारण ग्रस्ति भाग तथा तना, पुष्पक्रम, पुष्पदंड आदि फूलकर मांसल हो जाते हैं। इसके प्रभाव से उत्पन्न आंशिक व पूर्ण नपुंसकता के कारण बीज नहीं बन पाते। इस फूली हुई संरचना को स्टेगाहेड कहते हैं।

रोग प्रबंधन :-

* फसल की समय पर बुवाई करें। (1-20 अक्तूबर तक)

* स्वस्थ एवं प्रमाणित बीजों का उपयोग करें।

* बीज को मेटालेक्जिल (एप्रॉन 35 एस.डी.)/6 ग्राम प्रति कि.ग्रा. बीज की दर से उपचारित करके बोयें।

* रोगग्रस्ति फसल अवशेषें को जला दें। अथवा जमीन में गाड़ दें।

* फसल को खरपतवार-रहित रखें।

* फसल पर रोग लक्षण दिखाई देने पर रिडोमिल एम.जेड. 72/2 कि.ग्रा. का प्रति 1000 लीटर पानी में घोल बनाकर छिड़काव करें। यदि आवश्यकता पड़े तो दूसरा छिड़काव 15 दिनों बाद करें।

चूर्णिल आसिता रोग

रोग लक्षण :- यह रोग पौधों की निचली पत्तियों के दोनों ओर मटमैले सफेद रंग के धब्बों के रूप में प्रकट होता है। अनुकूल वातावरण में धब्बे धीरे-धीरे बढ़ते जाते हैं। ये आपास में मिलकर पौधे को संपूर्ण रूप से ढक लेते

हैं। इस प्रकार खड़ियानुमा चूर्ण सा फैल जाता है। ग्रसित पौधों की वृद्धि रूक जाती है और उन पर फल्लियों कम लगती है। ग्रस्ति फल्लियों में बीज सिकुड़ें हुए, छोटे व कम मात्रा में पाए जाते हैं।

रोग प्रबंधन :

* फसल की बुवाई समय पर करें।

* डायनोकेप अथवा घुलनशील गंधक का 0.1 प्रतिशत की दर से घोल बनाकर छिड़काव करें। आवश्यकता पड़ने पर छिड़काव 15 दिनों बाद पुन: दोहराएं। रोग की रोकथाम के लिए गंधक का चूर्ण/25 कि.ग्रा. प्रति हैक्टेयर की दर से फसल पर भुरकाव करें।

तना गलन रोग (स्क्लेरोटिनिया तना सड़न)

रोग लक्षण :- रोग, फसल पर फूल आने के बाद ही पनपता है। तने के निचले भाग में मटमैले या भूरे रंग के फफोले दिखाई देते हैं। प्राय: ये फफोले रूई जैसे सफेद जाल से ढके होते हैं। इस रोग से ग्रसित पौधे तेज हवा चलने पर फफोले वाली जगह से मुड़कर टूट जाते हैं। ऐसे पौधे समय से पहले ही पक जाते हैं। इनके पौधों के तनों को चीरकर देखे जाने पर उनके भीतर हरड़ या चूहें की मींगनी जैसी काली और कठोर संरचनाएं (स्क्लेरेशिया) दिखाई देती हैं। इन पौधों में बीज मुरझाए हुए, वजन में हल्के और बारीक होते हैं। इनमें तेल की मात्रा बहुत कम होती है।

सारणी :1 रोग एवं रोगजनक

क्र. सं.	रोग	रोगजनक
1.	काला धब्बा	अल्टरनेरिया ब्रेसिकी
2.	सफेद रोली	एल्बुगो केन्डीडा
3.	मृदुरोमिल आसिता	परनोस्पोरा पैरासिटिका
4.	चूर्णिल आसिता	एरीसाझी क्रूसीफेरम
5.	तना गलन	स्क्लेरोटिनिया स्क्लेरोटियोरम
6.	जड़ गलन	इरविनिया जीवाणु

रोग प्रबंधन :- * स्वस्थ व प्रमाणित बीजों का ही प्रयोग करें।

* अनुशंसित बीज दर का ही इस्तेमाल करें।

* बीज को 0.2 प्रतिशत कार्बेडाजिम अथवा 2 प्रतिशत लहसुन के सत से अथवा ट्राईकोडर्मा 6 ग्राम प्रति कि.ग्रा. बीज की दर से उपचारित करके बोयें।

* रोगग्रसित फसल अवशेषों को जलाकर या गड्ढों में दबाकर नष्ट कर दें।

* गर्मी के दिनों में खेतों की गहरी जुताई करें।

* फसल में कतारों और पौधों के बीज उचित दूरी बनाए रखें।

* उर्वरकों की अनुशंसित मात्रा ही प्रयोग करें।

* रोग के लक्षण दिखाई देने पर 0.1 प्रतिशत कार्बेडाजिम का फूल की अवस्था पर 20 दिनों के अंतराल में दो बार फसल पर छिड़काव करें। 2 प्रतिशत लहसुन के सत का घोल बनाकर फूल आने के समय (बुवाई के 50 दिनों बाद) छिड़काव करें। फसल की 50 से 70 दिनों की अवस्था पर ट्राईकोडर्मा आधारित उत्पाद का 0.2 प्रतिशत सांद्रता वाले घोल का छिड़काव करें।

* उचित फसल चक्र अपनाएं।

शेष पृष्ठ 8 पर

खेती संदेश

KHETI SANDESH

मुख्य कार्यालय :
9—ए, अजीत नगर,
पटियाला—147001
(पंजाब)
मो. 98151—04575

कार्पोरेट कार्यालय :
के.डी. कॉम्पलैक्स, गऊशाला रोड,
नजदीक शेरे पंजाब मार्केट,
पटियाला—147001
(पंजाब)
मो. 90410—14575

वर्ष : 02 अंक : 05
तिथि : 02-02-2026

सम्पादक
परमिंदर कौर

सम्पादकीय बोर्ड

डॉ. डी.डी. नारंग
डॉ. जे.एस. डाल
डॉ. आर.एम. फुलझेले

Editor : **PARMINDER KAUR**
Printer, Publisher and Owner of Weekly **'KHETI SANDESH'** Printed at **Drishti Printers**, Dasmesh Market, Near Sher-e-Punjab Market, Gaushala Road, Patiala-147001 (Pb.) and published from **Kheti Sandesh**, House No. 9-A, Ajit Nagar, Patiala-147001 (Pb.). E-mail : khetisandesh2025@gmail.com Mob. 90410-14575, RNI No.**PBBIL/25/A0210**

बरकरार रहे बगिया में बहार

रजनी अरोड़ा

सर्दी का असर इंडोर प्लांट्स पर भी पड़ता है, जैसे पत्ते झड़ जाना, रंग बदलना व फंगस अटैक। ऐसे में धूप व हवा प्रदान करने के मकसद से इन नाजुक पौधों को बाहर रखते हैं। वहां इनकी संभाल के लिए पूरी बगिया के बूटों की नियंत्रित सिंचाई, शेल्टर, पर्याप्त ह्यूमिडिटी और मल्चिंग ज़रुरी है।

रंग-बिरंगे हरे-भरे इंडोर प्लांट्स आपकी बगिया और घर की शोभा बढ़ाने में अहम् भूमिका निभाते हैं। इनमें स्नेक प्लांट, मनी प्लांट, कोलियस, क्रोटन, पाम, फिलोडेंड्रोन, जेड प्लांट, फाइकस, लिलि, फर्न जैसे पौधे आते हैं। लेकिन सर्दियों में ज्यादातर पौधे डोरमेंसी या रेस्ट पीरियड में चले जाते हैं। कम तापमान, सर्द हवा, कोहरा आदि का असर पौधों पर भी पड़ता है। इन्हें खराब होने से बचाने को सर्दियों में विशेष संभाल जरुरी है।

गुनगुनी धूप

जहां तक संभव हो इंडोर प्लांट्स को धूप में रखें ताकि इन्हें धूप से एनर्जी मिलती रहे। लम्बे समय तक अंधेरे में रहने से पौधे की जड़ें गलने लगती है। धूप से इनमें फोटो सिंथेसिस प्रक्रिया भी होगी और इनके रंग फीके या बदरंग होने से बचेंगे। अगर धूप न हो तो पौधों को घर के अंदर तेज़ रोशनी के नीचे रखना फायदेमंद है।

बचाव के लिए शैल्टर

सर्दी और ठंडी हवा ज्यादा हो तो बाहर रखे इंडोर प्लांट्स को चादर, ग्रीन नेट या पॉलीथीन शीट का शेल्टर बना कर कवर कर सकते हैं। इससे ओस और मिट्टी से भी बचाव होगा, क्योंकि इनसे पोर्स बंद होने पर पत्ते जलने लगते हैं।

नियंत्रित पानी

सर्दियों में पौधों की मिट्टी में काफी दिन तक नमी बनी रहती है, इसलिए अपने इंडोर पौधों में पानी बहुत कम दें। ज्यादा पानी देने से जड़ें गलने लगती है, फंगस लगने का डर रहता है। पानी देने से पहले चैक कर लें कि पौधे की मिट्टी ऊपर 1-2 इंच सूखी हो।

नियमित गुड़ाई

सप्ताह में एक दिन पौधे की मिट्टी की 1-2 इंच तक गुड़ाई करें। गुड़ाई से पौधों में एयर सर्कुलेशन बढ़ता है, जिससे जड़ें मज़बूत होती हैं।

ह्यूमिडिटी लेवल

कम ह्यूमिडिटी की वजह से फिलोडेंड्रोन जैसे पौधों के पत्ते खराब होने लगते है। इन्हें बचाने के लिए घर में ह्यूमिडिटी फायर लगाना चाहिए या फिर गमलों को इकट्ठे ग्रुप में रख दें।

मल्चिंग और रिपोटिंग

जड़ों को सर्दी से बचाने के लिए गमले की मिट्टी के ऊपर मल्चिंग करें। इसके लिए छोटे-छोटे स्टोन, नारियल रेशों, नीम के पत्तों की लेयर बिछा सकते हैं। वहीं सर्दी में डोरमेंसी में चले जाने के कारण कई इंडोर प्लांट्स के पत्ते झड़ने लगते हैं। जैसे क्रोटन में कई बार तो सिर्फ उसकी डंडी रह जाती है। पौधे को खराब होता सोच कर उसकी रिपोटिंग (गमला बदलना) या उसकी हार्ड प्रूनिंग (ज्यादा कटिंग) नहीं करनी चाहिए।

बल्ब सहेजना

कैलेडियम जैसे रंग-बिरंगे पत्तों वाले कई पौधों के पत्ते सर्दियों में खत्म हो जाते है। लेकिन उसका बल्ब मिट्टी में बना रहता है, जिसे सहेजने की जरुरत है।

नीम ऑयल स्प्रे

फंगस अटैक से बचने के लिए पौधों के पत्तों और मिट्टी पर 10-15 दिन में एक बार नीम ऑयल स्प्रे करें। सर्दियों में इंडोर पौधों को ज्यादा फर्टिलाइज़र की ज़रुरत नहीं है।

पंजाब में चंदन-1 : सरकारी नर्सरियों में एक पौधा 35 से 40 रुपए में उपलब्ध

होशियारपुर की तहसीलों में दो लाख पौध तैयार

सूबे में होशियारपुर आने वाले कुछ ही सालों में चंदन की पौध बड़े पैमाने पर तैयार करने वाला प्रमुख ज़िला बनने जा रहा है। इसकी दो तहसीलों दसूहा और होशियारपुर में खुशबूदार सफेद चंदन की पौध तैयार की जा रही है। यह आगामी जुलाई-अगस्त तक पूरी तरह तैयार हो जाएगी। इसे लगाने का सबसे अच्छा समय जुलाई से अगस्त या सितंबर है।

चंदन की लकड़ी देश में 8 से 10 हज़ार रुपए प्रति किलोग्राम, तो विदेश में 20 से 25 हज़ार रुपए प्रति किलोग्राम तक बिकती है। चंदन का पेड़ 13 से 15 साल में परिपक्व होने पर डेढ़ से दो लाख रुपए में बिक जाता है।

वन विभाग ने अब तक 15 हज़ार से अधिक पौधे फाज़िल्का, अबोहर, मुक्तसर, जालंधर, मोगा और हिमाचल प्रदेश के अलग-अलग ज़िलों में सप्लाई किए हैं। वन रेंज अफसर (होशियारपुर) हसपाल सिंह गाड़ा और कपल देव (दसूहा) के अनुसार ज़िले में खड्कां कैंप, भटोली, तलवाड़ा, जनौड़ी, ढोलबाहा, तखनी, गढ़दीवाला और होशियारपुर स्थित वन विभाग की नर्सरियों में चंदन की 2 लाख पौध तैयार है। यहां से एक पौधा 35 से 40 रुपए में खरीदा जा सकता है। होशियारपुर रेंज से करीब 7 हज़ार और दसूहा से 15 हज़ार पौधे खेती के लिए किसानों को दिए गए हैं। ज़िले की ज़मीन खासकर कंडी एरिया चंदन के लिए अनुकूल है।

जंगलात विभाग होशियारपुर में चंदन के पौधों की नर्सरियों के इंचार्ज ओम और गुरप्रीत कौर ने बताया कि चंदन का पौधा मदर फीड मांगता है। इसके साथ आंवला, शीशम जैसे पेड़-पौधे लगाए जा सकते हैं। खुश्क ज़मीन में चंदन की पैदावार अच्छी होती है।

सफेद चंदन में सुगंध भरपूर

भारतीय चंदन : इसका वैज्ञानिक नाम सैटालम एल्बम है। इसे चंदन, सफेद चंदन, श्वेतचंदन, गंडासरा भी कहते हैं। यह भारतीय संस्कृति का एक महत्वपूर्ण अंग है। यह पेड़ संरक्षण के तहत आता है। यह किस्म 13-20 फीट की ऊंचाई तक बढ़ सकती है। इसमें विभिन्न औषधीय गुण होते हैं। इसका तेल ऊंची कीमत पर बिकता है।

लाल चंदन में रंग आकर्षक

लाल चंदन : इसे रक्त चंदन के नाम से भी जाना जाता है। यह दक्षिणी भारत के पूर्वी घाटों में मिलता है। इस किस्म में आकर्षक लाल रंग तो होता है, लेकिन सुंदर दिखने वाली इसकी लकड़ी सुगंधित नहीं होती। यह किस्म अपेक्षाकृत छोटी होती है और 20-25 फीट तक बढ़ सकती है।

बीज कानून पाठशाला

कड़वे बोल – बीज अधिनियम 1966

बीज उत्पादन, प्रमाणीकरण एवं विपणन पावन, पवित्र एवं पुनीत कार्य है। बीज गुणवत्ता बनाए रखने के लिए दिनांक 29.12.1966 को भारत सरकार ने बीज अधिनियम की रचना की। बीज अधिनियम में गुणवत्ता बनाए रखने हेतु बीज निरीक्षक को असीम शक्तियां दी हैं, परन्तु वे इन शक्तियों को अपनी सुविधानुसार समीक्षा कर बीज व्यापारी वर्ग का शोषण करते हैं। बीज व्यापारी बेबस, लाचार और निरीह होकर कुछ नहीं कर पाता, बल्कि कृषि अधिकारियों को कोस लेता है। कुछ समय से मैंने बीज व्यापारियों की गतिविधियों का नजदीक से अध्ययन किया और अनुभव किया कि बीज व्यापारी केवल धनार्जन करने के लिए व्यापारी मात्र बन कर रह गया है। अतः कृषि अधिकारियों को कोसने मात्र से काम नहीं चलेगा बल्कि स्वाच्छिद्रान्वेषण (Intraspection) करना होगा। बीज व्यापारी बीज नियामकों का पालन न कर शोर्ट–कट से बीज तैयार कर रातो–रात धनाढय बनना चाहता है। नवोदित बीज व्यापारी 30–40 वर्षों से बीज व्यवसाय में लगे व्यापारियों की बराबरी करना चाहते और ऐसे व्यक्ति निजी स्वार्थ के लिए पूरे बीज व्यवसाय को बदनामी में धकेल देते हैं। अतः मैंने बीज उद्योग में उत्पन्न विसंगतियों को बीज व्यापारियों के संज्ञान में लाने का प्रयास 'कड़वे बोल' के रूप में किया है।

आर.बी. सिंह, बीज कानून रत्न, एरिया मैनेजर (सेवानिवृत), नेशनल सीड्स कारपोरेशन लिमिटेड (भारत सरकार का संस्थान), सम्प्रति – 'कला निकेतन', ई–70, विथिका 11, जवाहर नगर, हिसार–125001 (मो. 94667–46625)

A. बीज अधिनियम :

1. बीज कानून ज्ञान का अभाव :– कुछ व्यापारियों ने बीज व्यवसाय को अपने जीविकोपार्जन का जरिया बनाया और उन्होंने बीज व्यवसाय के विकास के लिए अपनी एक पीढ़ी होम कर दी। कुछ 30 साल से लगे है, परन्तु बीज कानूनों-बीज अधिनियम–1966, बीज नियम–1968, बीज नियंत्रण आदेश–1983, भारतीय न्यूनतम बीज प्रमाणीकरण मानक 1965, 1971, 1988, 2013, 2023 का अध्ययन नहीं किया। लेखक ने 4 पुस्तकें बीज कानूनों पर रचित की, परन्तु इन पुस्तकों या अन्य स्त्रोत से लेकर अध्ययन नहीं किया अर्थात् कोई खास रुचि नहीं दिखाई है। बीज व्यापारी जिस उद्योग में 30-40 वर्ष से लगे है, उसका गहरा ज्ञान नहीं तो आधारभूत ज्ञान तो होना चाहिए, परन्तु नहीं है और इस कारण व्यापारी अपनी गलतियों / अपराधों की सजा तो पाता ही है, बीज निरीक्षकों के ज्ञान के अभाव के कारण भी प्रताड़ित होता है। इतना ही नहीं बीज निरीक्षक के गलत आदेशों को मानना पड़ता है।

2. साहसी बनना :– ऐसे व्यापारी ज्यादा आसानी से व्यापार नहीं चला पायेंगे, जो यह कहते है कि समुन्द्र में रह कर मगरमच्छ से बैर कर बीज उद्योग में नहीं रह सकते। वे व्यक्ति भी ज्यादा बीज व्यापार नहीं पायेंगे, जो उपभोक्ता मामलों तथा विभागीय मामलों में वकीलों को भारी भरकम फीस देकर कहते है, हम दिमाग क्यों लगाएं, जब हमने वकील कर रखा है। वकील को अपने केस से संबंधित तकनीकी या कृषि संबंधी सूचना देकर केस वज़नदार बनाया जा सकता है।

हम ऐसे बीज ज्ञान को महत्त्व ही नहीं देते, जो आसानी से मिल जाता हो या नि:शुल्क मिल जाता हो। इसीलिए बीज उद्योग ने बीज कानूनी ज्ञान जो सरल, सौम्य तथा परिभाजित हिन्दी भाषा में उपलब्ध है, उनको नहीं अपनाया। मैं यह भी मानता हूं कि जब तक बीज उद्यमी नुकसान से बीज ज्ञान की कीमत न चुका दे, तब तक बीज कानूनी ज्ञान का महत्त्व नहीं समझ पाते। मैंने विगत वर्षों में यह प्रयास किया कि बीज व्यवसाय के चारों ओर बीज कानून की वह लक्ष्मण रेखा खींच दूं कि बीज व्यापारी कृषि अधिकारी के कोप का भाजन न बनना पड़े। मैं जिस उत्साह से इन कानूनों की रचना करता हूं, वह उत्साह व्यापारियों ने इस साहित्य को लेने में नहीं दिखाया। मेरी कानून पुस्तकें नया बीज अधिनियम आने के लगभग 10 साल तक काम देंगी और साथ ही प्रारम्भिक ज्ञान देंगी।

3. जी.ओ.टी. वैज्ञानिक तरीके से :– कुछ व्यापारी धान या सब्ज़ी बीजों में शिकायत से बचने के लिए प्रत्येक लॉट की जी.ओ.टी. (G.O.T.) करके विक्रय करते है, बीज उत्पादन वितरण की अच्छी सोच है परन्तु जी.ओ.टी. वैज्ञानिक तरीके से नहीं करते। चैक में लगाने के लिए किस्म विकसित करने वाले वैज्ञानिक से ब्रीडर बीज नहीं लेते। रिपोर्ट नहीं बनाते तथा फाइनल ओबजरवेशन सही समय नहीं लेते। जी.ओ.टी. के लिए भारतीय न्यूनतम बीज प्रमाणीकरण मानक के अनुसार प्लांट डिजाइन नहीं बनता। जी.ओ.टी. करने का रिकॉर्ड नहीं रखते हैं।

4. किस्म रिसर्च किस्में : भारत में बीज विक्रय की शर्त धारा 7 में है, जिनमें सबसे प्रथम है किस्म की पहचान। गला काट प्रतिस्पर्धा के कारण हर निजी बीज उत्पादक रातो-रात धनाढय होना चाहता है। उच्च स्तर के बीज व्यापारियों ने अनुसंधान के लिए अपने रिसर्च फार्म डेवलोप कर लिए हैं। कृषि वैज्ञानिकों की

नियुक्ति कर किस्म विकास कर रहे है तथा निदेशालय औद्योगिक एवं वैज्ञानिक संस्थान से आर. एण्ड डी. प्रमाण-पत्र प्राप्त कर अपनी रिसर्च को मान्यता प्राप्त कर अनुसंधान को मौलिकता दी जा रही है। बीज व्यापारियों के मनोमस्तिष्क में घुस गया है कि शासकीय संस्थाओं तथा कृषि विश्वविद्यालयों के द्वारा विकसित किस्मों का बीजोत्पादन कर लाभ नहीं कमाया जा सकता। अतः बीज उत्पादक बिना फार्म तथा वैज्ञानिक एवं अनुसंधान पर खर्च किए नई किस्म विकसित कर रहे हैं और उसको 'रिसर्च किस्म' नाम देकर चांदी कूट रहे हैं। व्यापारी रिसर्च किस्म को इस तरह प्रचारित प्रसारित करता है जैसे कृषि विश्वविद्यालयों तथा शासकीय अनुसंधान संस्थानों की किस्में रिसर्च के अलावा अन्य तरीकों से विकसित की हों। ये कोई रिसर्च किस्में नहीं है बल्कि किसी विश्वविद्यालय द्वारा विकसित लोकप्रिय किस्म होती है, जिनका रातो-रात नाम बदल कर विक्रय किया जाता है। आजकल बीज विक्रेता बीज उत्पादकों को रकम कूटते देख पीछे नहीं रहना चाहते हैं और वे भी सीज़न आने से पूर्व 4 किस्में तैयार रखते है, इस गैर-कानूनी आदत को छोड़ना होगा।

5. खुला बीज विक्रय : बीज अधिनियम 1966 लागू होने के बाद खुला बीज बेचना अपराध है। बीज अधिनियम की धारा-7 के अनुसार बीज किसी कन्टेनर में भरा हो, उस पर लेबल लगा हो और उस लेबल पर भारतीय बीज प्रमाणीकरण के मानक अंकित हों, अतः खुला बीज न बेचें। कन्टेनर, जूट कपड़े की थैली, प्लास्टिक पाऊच, टिन, कार्ड बोक्स आदि हो सकते हैं।

क्रमशः

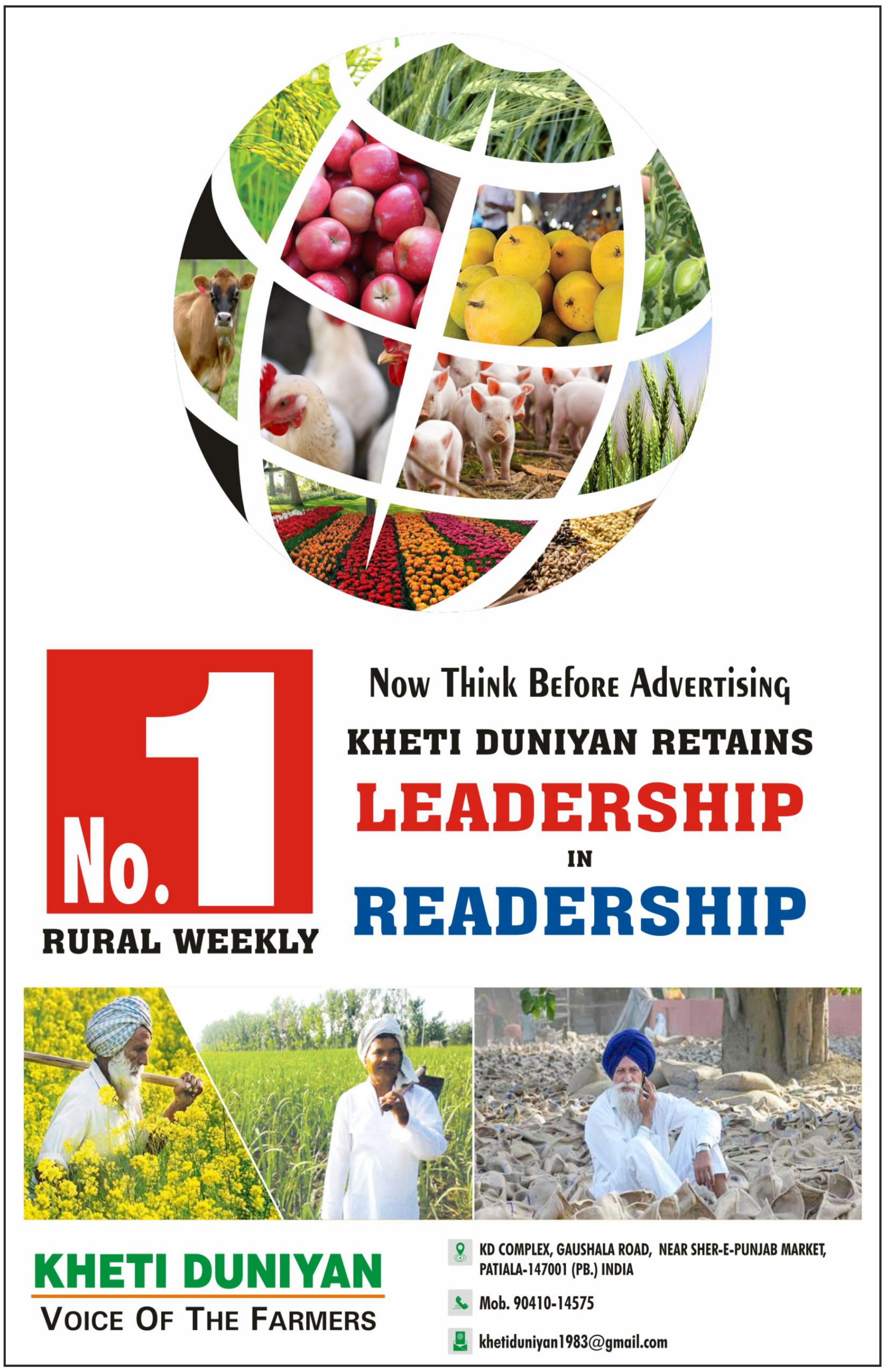

अधिक दुग्ध उत्पादन के लिए संतुलित आहार

भारतवर्ष में दुग्ध उत्पादन को बढ़ाना मूलतः भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद् के अनुसंधान संस्थानों व कृषि विश्वविद्यालायों की विभिन्न अनुसंधान शालाओं में विकसित वैज्ञानिक तकनीकों व अनुमोदनों को सही तरीके से लागू करने में निहित है। अनुसंधान प्रेक्षत्र व कृषक प्रेक्षत्र के दुग्ध उत्पादन स्तर में बहुत ज्यादा अंतर है, इसका कारण अनुसंधान प्रेक्षत्र में वैज्ञानिक विधियों को अपनाया जाना ही है। भारतीय अर्थव्यवस्था में कृषि एवं पशुपालन का विशेष महत्व है। घरेलू कृषि उत्पाद में पशुपालन का योगदान सराहनीय है, जिसका योगदान सर्वाधिक है। भारत लगभग 176.35 मिलियन (17.635 करोड़) टन दुग्ध उत्पादन करके विश्व में प्रथम स्थान पर है, जो कि एक मिसाल है। यह उपलब्धि पशुपालन से जुड़े विभिन्न पहलुओं जैसे पशुओं की नस्ल, पशु–पोषण, स्वास्थ्य एवं आवास प्रबंधन इत्यादि में किए गए अनुसंधान है। लेकिन आज भी कुछ अन्य देशों की तुलना में हमारे पशुओं की दुग्ध उत्पादन क्षमता अत्यंत कम है।

हमारे देश की आबादी के अनुपात में कृषि योग्य भूमि घटती जा रही है और ऐसी परिस्थितियों में पशुपालन को एक व्यवसाय के रूप में अपनाकर किसान कृषि उत्पादन पर अपनी निर्भरता कम कर सकते है। बैंकों व अन्य सरकारी प्रतिष्ठानों द्वारा वितीय सहायता उपलब्ध करवाने व पशु बीमा योजना के शुरू होने से शिक्षित युवा वर्ग एवं खेतिहर मजदूर पशुपालन को व्यवसाय के रूप में अपनाने लगे है। इससे किसानों की आमदनी बढ़ने के साथ-साथ उनके परिवार के सदस्यों तथा खेतिहर महिला एवं मजदूरों को पूरे वर्ष रोजगार उपलब्ध हो सकेगा। दुधरू पशुओं के आर्थिक महत्व को देखते हुए संतुलित एवं पोष्टिक आहार अत्यावश्यक है तथा पशु पालकों को इसके बारे में अधिक से अधिक ज्ञान देने की जरूरत है। इसी बात को ध्यान में रखते हुए अधिक उत्पादन के लिए संतुलित एवं पोष्टिक आहार अत्यंत आवश्यक है। दुधारू पशुओं को संतुलित आहार खिलाने से दुग्ध उत्पादकता में वृद्धि और प्रजनन क्षमता में सुधार लाया जा सकता है। सामान्यतः भारत में दुधारू पशुओं को मुख्य रूप से पुआल आधारित आहार खिलाया जाता है, जिसमें स्थानीय स्तर पर उपलब्ध एक या दो खाद्य पदार्थ जैसे चोकर, खली, चुरी आदि मिलाए जाते है।

इससे पशुओं के आहार में अक्सर प्रोटीन, ऊर्जा और खनिज तत्वों का असंतुलन हो जाता है। असंतुलित आहार से पशुओं के दूध उत्पादन पर असर पड़ता है तथा इसकी लागत भी अधिक होती है। साथ ही पशुओं की प्रजनन क्षमता भी प्रभावित होती है।

क्या है पोषण का उद्देश्य: शरीर को सुचारू रूप से कार्य करने के लिए पोषण की आवश्यकता होती है, जो उसे आहार से प्राप्त होता है। पशु आहार में पाये जाने वाले विभिन्न पदार्थ शरीर की विभिन्न क्रियाओं में इस प्रकार उपयोग में आते है:

- पशु आहार शरीर के तापमान को बनाये रखने के लिए ऊर्जा प्राप्त करता है।

- यह शरीर की विभिन्न उपापचयी क्रियाओं, श्वासोच्छवास, रक्त प्रवाह और समस्त शरीरिक एवं मानसिक क्रियाओं हेतु ऊर्जा प्रदान करता है।
- यह कोशिकाओं और ऊतको की टूट-फूट जो जीवन पर्यान्त होती रहती है, की मुरम्मत के लिए आवश्यक सामग्री प्रदान करता है।
- यह शारीरिक विकास, गर्भस्थ शिशु की वृद्धि तथा दूध आदि के लिए आवश्यक पोषक तत्व प्रदान करता है।

क्या हैं पशु आहार के मुख्य तत्व: रसायनिक संरचना के अनुसार कार्बोहाइड्रेट, वसा, प्रोटीन, विटामिन तथा खनिज लवण भोजन के प्रमुख तत्व है। डेयरी पशु शाकाहारी होते है अतः ये सभी तत्व उन्हें पेड़ पौधों से, हरे या सूखे चारे अथवा दाने प्राप्त होते है।

कार्बोहाइड्रेट: कार्बोहाइड्रेट मुख्यतः शरीर के ऊर्जा प्रदान करते है। यह हरा चारा, भूसा कड़वी तथा सभी आनाजों से प्राप्त होते है।

प्रोटीन: प्रोटीन शरीर की संरचना का एक प्रमुख तत्व है। यह प्रत्येक कोशिका की दीवारों तथा आंतरिक संरचना का प्रमुख अवयव है। शरीर की वृद्धि, गर्भस्थ शिशु की वृद्धि तथा दुग्ध उत्पादन के लिए प्रोटीन आवश्यक होती है। कोशिकाओं की टूट-फूट की मुरम्मत के लिए भी प्रोटीन बहुत जरूरी है। पशु को प्रोटीन मुख्य रूप से खली, दालें तथा फलीदार चोर जैसे बरसीम, रिजका, लोबिया, ग्वार आदि से प्राप्त होती है। दोने में प्रयुक्त खलियां इसका प्रमुख श्रोत है।

वसा: पानी में न घुलने वाले चिकने पदार्थ जैसे घी, तेल इत्यादि वसा कहलाते है। कोशिकाओं की संरचना के लिए वसा एक आवश्यक तत्व है। यह त्वचा के नीचे या अन्य स्थानों पर जमा होकर ऊर्जा के भंडार के रूप में काम आती है एवम भोजन की कमी के दौरान उपयोग में आती है जो उसे आसानी से चारे और दाने से प्राप्त हो जाती है। वसा के मुख्य स्रोत बिनोला तिलहन, सोयाबीन व खली है।

विटामिन: शरीर की सामान्य क्रियाशीलता के लिए पशुओं को विभिन्न विटामिनों की आवश्यकता होती है। ये विटामिन उसे आम तौर पर हरे चारे से पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध हो जाते है। विटामिन 'बी' तो पशु के पेट में उपस्थित सूक्ष्म जीवाणुओं द्वारा पर्याप्त मात्रा में संश्लेषित होता है। अन्य विटामिन जैसे ए, सी, डी, ई तथा के, पशुओं को चारे और दाने द्वारा मिल जाते है। विटामिन ए की कमी से भैंसों में गर्भपात, अंधापन चमड़ी का सूखापन, भूख की कमी, गर्मी में न आना तथा गर्भ का न रूकना आदि समस्यायें हो जाती है।

खनिज लवण: खनिज लवण मुख्यतः हड्डियों तथा दांतों की रचना के मुख्य भाग है तथा दूध में भी काफी मात्रा में स्रावित होते है। ये शरीर के एंजाइम और विटामिनों के निर्माण में काम आकर शरीर की कई महत्वपूर्ण क्रियाओं को निष्पादित करते है। इनकी कमी से शरीर में कई प्रकार की बीमारियां हो जाती है। कैल्शियम, फॉस्फोरस, पोटैशियम, सोडियम, क्लोरीन, गंधक, मैग्नीशियम, मैगनीज, लोहा, तांबा, जस्ता, कोबाल्ट, आयोडिन, सेलेनियम इत्यादि शरीर के लिए आवश्यक प्रमुख लवण है। दूध उत्पादन की अवस्था में भैंस व गाय को कैल्शियम तथा फास्फोरस की अधिक आवश्यकता होती है। प्रसूति काल में इसकी कमी से दुग्ध ज्वर हो जाता है तथा बाद की अवस्थाओं में दूध उत्पादन घट जाता है एवं प्रजनन दर में भी कमी आती है। कैल्शियम की कमी के कारण गाभिन भैंसें फूल दिखाती है क्योंकि चारे में उपस्थित खनिज लवण भैंस की आवयकताओं की पूर्ति नहीं कर पाते, इसलिए खनिज लवणों को अलग से खिलाना आवश्यक है।

क्या होता है संतुलित पशु आहार– संतुलित आहार उस आहार सामग्री को कहते है जो किसी विशेष पशु की 24 घंटे की निर्धारित पोषण आवश्यकताओं की पूर्ति करता है। संतुलित राशन में कार्बोहाइड्रेट, वसा और प्रोटीन के आपसी विशेष अनुपात के लिए कहा गया है। संतुलित राशन में मिश्रण के विभिन्न पदार्थों की मात्रा मौसम और पशु भार तथा उसकी उत्पादन क्षमता के अनुसार रखी जाती है। एक राशन की परिभाषा इस प्रकार की जा सकती है, एक पशु 24 घंटे में जितना भोजन अन्तग्रहण करता है, वह राशन कहलाता है। राशन या तो संतुलित होगा या असंतुलित। असंतुलित राशन वह होता है जोकि पशु को 24 घंटों में जितना पोषक तत्वों की आवश्यकता होती है, वह देने में असफल रहता है। जबकि संतुलित राशन पशु को समय पर 'ठीक' मात्रा में पोषक तत्व प्रदान करता है। संतुलित आहार में प्रोटीन, कार्बोहाइड्रेट, मिनरल्स तथा विटामिनों की आवश्यकता अनुसार उचित मात्रा में रखी जाती है। पशु को जो आहार खिलाया जाता है उसमें यह बात ध्यान में रखनी चाहिए कि उसे जरूरत के अनुसार शुष्क पदार्थ, पचनीय प्रोटीन तथा कुल पाचक तत्व उपलब्ध हो सकें। भैंस में शुष्क पदार्थ की आवश्यकता प्रतिदिन 2.5 से 3.0 किलोग्राम प्रति 100 किलोग्राम शरीर भार के अनुसार होती है। इसका तात्पर्य यह है कि 400 किलोग्राम भार वाले पशुओं के लिए 12 किलोग्राम शुष्क पदार्थ की आवश्यकता पड़ती है। इस शुष्क पदार्थ को हम चारे और दाने में विभाजित करे तो शुष्क पदार्थ का लगभग एक तिहाई हिस्सा दाने के रूप में खिलाना चाहिए। उत्पादन व अन्य आवश्यकताओं के अनुसार जब हम पचनीय प्रोटीन और कुल पाचक तत्वों की मात्रा निकालते है तो यह गणना काफी कठिन हो जाती है। इसका एक प्रमुख कारण यह है कि जो चारा पशु को खिलाया जाता है उसमें पाचक प्रोटीन और कुल पाचक तत्वों की मात्रा ज्ञात करना किसान के लिए लगभग असंभव है। ऐसा इसलिए है की पाचक प्रोटीन और कुल पाचक तत्वों की मात्रा प्रत्येक चारे के लिए अलग होती है। यह चारे की परिपक्वता के अनुसार बदल जाती है। अनेक बार उपलब्धता के आधार पर कई प्रकार का चारा एक साथ मिलाकर खिलाना पड़ता है। किसान चारे को कभी भी तोलकर नहीं खिलाता है। इन परिस्थितियों में सबसे आसान तरीका यह है कि किसान द्वारा खिलाये जाने वाले चारे की गणना यह मान कर कि जाये कि पशु को चारा भरपेट मिलता रहे। अब पशु की जरूरत के अनुसार पचनीय प्रोटीन और कुल पाचक तत्वों में कमी की मात्रा को दाना मिश्रण देकर पूरा कर दिया जाता है। इस प्रकार पशुओं को खिलायार गया आहार संतुलित हो जाता है।

संतुलित दाना मिश्रण पशु को कितना खिलायें?: वैज्ञानिक दृष्टि से पशुओं के शरीर के भार के अनुसार उसकी आवश्यकताओं जैसे कि जीवन निर्वाह, विकास तथा उत्पादन आदि के लिए भोजन के विभिन्न तत्व जैसे प्रोटीन, कार्बोहाइड्रेट, वसा, खनिज, विटामिन तथा पानी की आवश्यकता होती है। पशुओं में आहार की मात्रा उसकी उत्पादकता तथा प्रजनन की अवस्था पर निर्भर करती है। पशु को कुल आहार का 2/3 भाग चारे से तथा 1/3 भाग दाने के मिश्रण द्वारा मिलना चाहिए। चारे में दलहनी तथा गैर दलहनी चारे का मिश्रण दिया जा सकता है। दलहनी चारे की मात्रा आहार में बढ़ने से काफी हद तक दाने की मात्रा को कम किया जा सकता है। वैसे तो पशु के आहार की मात्रा का निर्धारण उसके शरीर की आवश्यकता व कार्य के अनुरूप तथा उपलब्ध भोज्य पदार्थों में पाए जाने वाले पोषक तत्वों के आधार पर गणना करके किया जाता है, लेकिन पशुपालकों को गणना कार्य की कठिनाई से बचाने के लिए थम्ब रूल को अपनाने अधिक सुविधाजनक है। इसके अनुसार हम मोटे तौर पर वयस्क दुधारू पशु के आहार को 4 वर्गों में बांट सकते है।

1. जीवन निर्वाह के लिए आहार

शेष पृष्ठ 8 पर

गेंदा की वैज्ञानिक खेती कर लाभ कमायें

गेंदा के फूलों का उपयोग विभिन्न अवसरों सजावटी कार्यो हेतु किया जाता है। इसके फूल हार बनाने, त्योहारों, शादियों व मण्डपों को सजाने तथा इन्हें पूजा इत्यादि के लिए प्रयोग में लाया जाता है। यहां तक कि गेंदा की नारंगी रंग की किस्मों से खाने के प्रयोग में आने वाला रंग भी निकाला जाता है। यहां तक कि सुगन्धित तेल तथा फसलों के सूत्रकृमि व कीट प्रबंधन हेतु भी गेंदा की खेती लाभप्रद सिद्ध हो रही है।

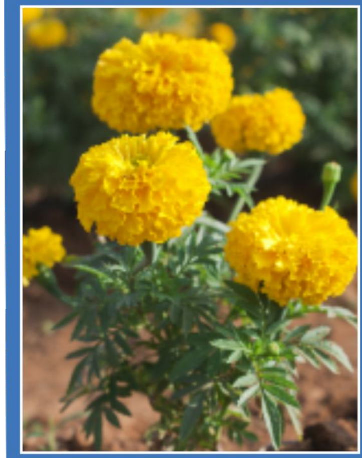

भरत सिंह,
विशेषज्ञ, कृषि विज्ञान केन्द्र
(भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान), शिकोहपुर, गुरूग्राम

व्यापारिक दृष्टि से गेंदा एक बहुत ही महत्वपूर्ण फूल है। अगस्त से अक्तूबर के मध्य गेंदा के फूलों की मांग बहुत अधिक बढ़ जाती है इस समय फूलों की बिक्री करके अच्छी पूंजी अर्जित की जा सकती है।

गेंदा के फूलों का उपयोग विभिन्न अवसरों सजावटी कार्यों हेतु किया जाता है। इसके फूल हार बनाने, त्योहारों, शादियों व मण्डपों को सजाने तथा इन्हें पूजा इत्यादि के लिए प्रयोग में लाया जाता है। यहां तक कि गेंदा की नारंगी रंग की किस्मों से खाने के प्रयोग में आने वाला रंग भी निकाला जाता है। यहां तक कि सुगन्धित तेल तथा फसलों के सूत्र कृमि व कीट प्रबंधन हेतु भी गेंदा की खेती लाभप्रद सिद्ध हो रही है।

देश के मैदानी भागों में गेंदा की खेती वर्ष भर सफलता पूर्वक की जा सकती है जबकि उत्तरी भारत में इसकी तीन प्रमुख फसलों - वर्षा कालीन, शीतकालीन एवं ग्रीष्म कालीन किस्मों की खेती की जाती है।

प्रजातियां :-

1. अफ्रीकी गेंदा (टैगेटिस इरेक्टा) :- सामान्यत: अफ्रीकी गेंदा के पौधों की लम्बाई 80-100 सै.मी. होती है। इनकी पत्तियां चौड़ी तथा फूल पीले, नारंगी व सफेद रंग के एवं गोलाकार होते हैं। इनके फूलों का आकार 6-10 सै.मी. तक होता है। अफ्रीकी गेंदा दो प्रकार के होते हैं -

कारनेशन के समान फूल वाले तथा गुलदाउदी के समान फूल वाले :- मुख्यत: कारनेशन के समान फूल वाली नारंगी रंग की किस्में व्यापारिक दृष्टि से बहुत ही महत्वपूर्ण किस्में हैं।

मुख्य किस्में :

1. पूसा नारंगी गेंदा :- यह किस्म बीज की बुवाई से फूलने तक 125-135 दिन का समय लेती हैं। पौधे औसतन 73 सै.मी. ऊंचे तथा स्वस्थ होते हैं। इसके फूल नारंगी रंग के बहुपंखडियों युक्त तथा 7-8 सै. मी. व्यास वाले होते हैं। ताजे फूलों की उपज लगभग 350 क्विंटल प्रति हैक्टेयर तक होती है। फूल माला बनाने तथा धार्मिक अनुष्ठानों के लिए अति उत्तम किस्म है। इसके फूलों से जैन्थोफिल निकालकर कैप्सूल के रूप में मुर्गी दाने के साथ खिलाने से अण्डों की जर्दी का रंग अधिक पीला हो जाता है जिससे बाजार में अण्डों का मूल्य अधिक मिलता है।

2. पूसा बसंती गेंदा :- यह किस्म बीज बोने से फूलने तक 135-145 दिन का समय लेती है। पौधे 50-60 सै.मी. ऊंचे तथा स्वस्थ होते हैं। फूल गंधक के समान पीले रंग के बहुपंखड़ियों युक्त तथा 6-7 सै. मी. व्यास वाले होते हैं। एक पौधे पर लगभग 60 पुष्प आते है। पुष्पोत्पादन की अवधि 40-45 दिन है। यह किस्म गृह उद्यानों, गमलों तथा क्यारियों में उगाने के लिए अति उपयुक्त है।

3. फ्रांसीसी गेंदा (टेगेटिस पेटूला) :- इसके पौधे 20-60 सै.मी. की ऊंचाई तक बढ़ते हैं। इन्हें आम भाषा में जाफरी भी कहते है। इसके फूलों का आकार 3-5 सै.मी. होता है। फूल पीले, नारंगी, मटियाले चित्तीदार लाल या इनके मिश्रित रंग के होते हैं।

4. जंगली गेंदा (टेगेटिस माइनूटा) :- इसके पौधे लगभग 130-150 सै.मी. लम्बे होते हैं फूल लौंग के समान हल्के पीले रंग वाले गुच्छों में तथा अधिक संख्या में होते हैं। सुगन्धित तेल निकालने के लिए पूरा पौधा प्रयोग किया जाता है।

मुख्य किस्में :- डैन्टी मेरिटा, नौटी मेरिटा, सन्नी, बोनीटा, बटर स्कॉच, डबल हारमोनी, लेमन ड्राप, मिलोडी पिटाइट हारमोनी, पिटाइट आरेंज, पिटाइट येलो, रैड ब्रोकेड, रस्टी रैड, टैन्जेरियन येलो इत्यादि।

जलवायु :- गेंदे के पौधे काफी सहिष्णु होते हैं। ये उष्ण कटिबंधीय एवं उपोष्ण जलवायु वाले भागों में वर्ष भर कुशलता पूर्वक उगाये जा सकते हैं। गेंदे के पौधों के लिए धूप वाली जगह उपयुक्त होती है। छाया वाली नहीं।

मिट्टी एवं उसकी तैयारी :- गेंदे की सफल खेती के लिए बलुई-दोमट मिट्टी सर्वोत्तम है। वह मिट्टी जिसका पी. एच. मान 7 से 7.5 हो तथा जिसमें वायु संचार एवं जल निकास का उचित प्रबंध हो, बहुत ही उपयुक्त होती है। पौधों को लगाने से पहले मिट्टी को 30 सै.मी. गहरा खोदा जाता है। भूमि तैयार करते समय अच्छी तरह सड़ी हुई गोबर की खाद 30 टन प्रति हैक्टेयर के हिसाब से भूमि में मिलाना आवश्यक है।

पौध तैयार करना :- नर्सरी तैयार करने हेतु भूमि को अच्छी तरह से 30 सै.मी. गहरी खोद लेना चाहिए तथा उसमें पत्ती की सड़ी खाद या गोबर की सड़ी हुई खाद मिलाकर मिट्टी को भुरभुरी बना लेना चाहिए। इसके बाद उसमें नर्सरी के लिए क्यारियां 15 सै.मी. ऊंची, 1 मीटर चौड़ी तथा 5-6 मीटर लम्बी बनाते है। एक हैक्टेयर क्षेत्र के लिए 700-800 ग्राम बीज की मात्रा पर्याप्त होती है। क्यारियां तैयार होने के बाद, बीज को 6-8 सै.मी. की दूरी पर तथा 2 सै.मी. की गहराई पर बोते हैं। इसके बाद बीजों को अच्छी तरह छनी हुई गोबर या पत्ती की खाद की हल्की परत से ढक देते हैं। नर्सरी में महीन हजारे से रोजाना पानी का छिड़काव करना चाहिए। यदि बीज स्वस्थ हैं तो वे 5-6 दिनों में उग आते हैं।

ग्रीष्मकालीन फसल लेने के लिए बीज जनवरी-फरवरी में बो दिए जाते हैं। वर्षाकालीन फसल के लिए बुवाई मई-जून में करना उचित है। सितम्बर-अक्तूबर शीतकालीन फसल की बुवाई के लिए उत्तम है।

पौधों को क्यारियों में लगाना :- आमतौर पर बीजाई के एक महीने बाद पौधों को नर्सरी से निकालकर क्यारियों में लगा दिया जाता है। अफ्रीकी गेंदे को 40×40 सै.मी. की दूरी पर तथा फ्रांसीसी गेंदे को 30×30 सै.मी. की दूरी पर लगाते हैं। अफ्रीकी गेंदे में पौध रोपने के बाद एक-एक महीने के अंतराल पर पौधों की चोटी की कलिकाओं को दो-तीन पत्तियों सहित हाथ से तोड़ देना चाहिए। इस समय में यदि कोई पुष्प कलिका बन जाए तो उसे भी तोड़ देना चाहिए। ऐसा करने से पार्श्व शाखाओं की संख्या बढ़ जायेगी जिससे फूलों की संख्या भी बढ़ जाएगी।

खाद :- अच्छी फसल के लिए 120 कि.ग्रा. नाइट्रोजन, 80 कि.ग्रा. फास्फोरस तथा 80 कि. ग्रा. पोटाश प्रति हैक्टेयर की दर से देना चाहिए। फास्फोरस एवं पोटाश की पूर्ण मात्रा भूमि तैयार करते समय तथा नाइट्रोजन की आधी मात्रा पौधों के क्यारियों में लगाने के एक माह बाद एवं बाकी आधी मात्रा दो माह बाद लगानी चाहिए।

सिंचाई :- गर्मी के दिनों में पौधों को 4-5 दिन के अंतर पर पानी देना चाहिए। जाड़ों में 8-10 दिन के अंतर पर ही सिंचाई की आवश्यकता पड़ती है। वर्षा के दिनों में पौधों की सिंचाई आवश्यकतानुसार की जाती है।

फूल उत्पादन का समय एवं फूलों का तोड़ना :- ग्रीष्मकालीन फसल मई के मध्य से फूल देना आरम्भ कर देती है। वर्षाकालीन फसल सितम्बर के मध्य से फूलों का उत्पादन आरम्भ करती है। शीतकालीन फसल में मध्य जनवरी से फूलों का आना शुरू हो जाता है। फूलों को पूरा खिलने पर ही तोड़ना चाहिए। जहां तक संभव हो, फूलों को प्रात:काल या सांयकाल ही तोड़ना चाहिए और तोड़कर ठंडे स्थान में एकत्र करना चाहिए। उसके पश्चात् उन्हें बांस की टोकरियों में भरकर बाजार में बस या ट्रक द्वारा भेज देना चाहिए।

फूलों की उपज :- फ्रांसीसी गेंदा के ताजे फूलों की उपज 100-120 क्विंटल प्रति हैक्टेयर तथा अफ्रीकी गेंदा के ताजे फूल 200-250 क्विंटल प्रति हैक्टेयर तक उपज प्राप्त की जा सकती है।

पौधा संरक्षण :

कीट : चूसक कीट :- गेंदा की फसल में विभिन्न चूसक कीटों - हरा तेला, थ्रिप्स एवं लाल मकड़ी इत्यादि कीटों का प्रकोप होता है जो कि पौधों की वृद्धि कलिका व मुलायम भागों का रस चूसकर उन्हें कमजोर कर देते हैं जिससे पौधों की वृद्धि रूक जाती है यहां तक कि पौधों पर फफूंद के संक्रमण हो जाने से वे रोगी हो कर सूखने लगते हैं।

इन कीटों की रोकथाम हेतु मैलाथियान मा डायका फौल 1-2 मि.ली. प्रति लीटर पानी की दर से आवश्यकतानुसार मात्रा में घोल तैयार कर शाम के समय फसल पर छिड़काव करें।

आवश्यकता पड़ने पर 10 दिन बाद यह छिड़काव पुन: दुहरायें।

अमेरिकन वॉल वार्म :- यह एक सर्वभक्षी कीट है जो कि यदा-कदा गेंदा की फसल को बहुत अधिक हानि पहुंचाता है। शुरू में इस कीट की गिडार गेंदा की पौधों की मुलायम पत्तियों व वृद्धि कलिका को खाकर विकसित होती है जो कि बाद में फूलों की छोटी व अविकसित कलिकाओं को काटकर फसल को भारी क्षति पहुंचाती है।

इस कीट की रोकथाम हेतु क्वीनॉलफास 1 मिली. प्रति लीटर पानी की दर से घोल तैयार फसल पर शाम के समय छिड़काव करें। या जैविक कीटनाशी - बी. टी. या एन. पी. वी. क्रमश: 1 ग्राम/1 मिली. प्रति लीटर पानी की दर से घोल तैयार कर शाम के समय फसल पर छिड़काव करें।

नीला भृंग (ब्लू बीटल) :- ये कीट फूलों की मुलायक पंखड़ियों को काटकर उन्हें क्षति पहुंचाते है यहां तक कि फूलों के बीच छिपकर रहते हैं।

इस कीट की रोकथाम हेतु नूवान या क्वीनालफास 1-2 मिली. प्रति लीटर पानी की दर से घोल तैयार कर शाम के समय फसल पर छिड़काव करें।

रोग :- गेंदा की फसल को चूर्णी फफूंद, रतुआ, झुलसा रोग तथा जीवाणु व विषाणु जनित रोग क्षति पहुंचाते हैं।

चूर्णी तथा रतुआ फफूंद रोग की रोकथाम के लिए घुलनशील गंधक (कैराथेन/सल्फेक्स) 2 ग्राम प्रति लीटर पानी की दर से घोल तैयार कर फसल पर छिड़काव करें तथा धब्बा व झुलसा रोग की रोकथाम हेतु कॉपर आक्सीक्लोराइड 3 ग्राम प्रति लीटर पानी की दर से घोल तैयार कर फसल पर 10 दिनों के अंतर पर छिड़काव करें। इसके अलावा चूसक कीटों के संक्रमण पर विशेष निगरानी रखें तथा उचित समय पर संश्लेषित कीटनाशी- नूवान, मिथाइल डिमेटॉन या मैटासिस्टॉक्स 1 मि.ली. प्रति लीटर पानी की दर से घोल तैयार कर छिड़काव करें जिससे कि जीवाणु व विषाणु जनित रोग संवाहक-चूसक कीटों को नियंत्रण में रखा जा सके।

शेष पृष्ठ 6 की

अधिक दुग्ध उत्पादन के लिए संतुलित आहार

2. उत्पादन के लिए आहार

3. गर्भावस्था के लिए आहार तथा

4. नवजात बछड़े के लिए आहार।

1. कितना उचित है जीवन निर्वाह के लिए आहार?

यह आहार की वह मात्रा है जिसे पशु को अपने शरीर को स्वस्थ रखने के लिए दिया जाता है। इसे पशु अपने शरीर के तापमान को उचित सीमा में बनाए रखने, शरीर की आवश्यक क्रियायें, जैसे पाचन क्रिया, रक्त परिवहन, श्वसन, उत्सर्जन, चयापचस आदि के लिए काम में लाता है। इससे उसके शरीर का वजन भी एक सीमा में स्थिर बना रहता है। चाहे पशु उत्पादन में हो या न हो इस आहार को उसे देन ही पड़ता है, इसके अभाव में पशु कमजोर होने लगता है, जिसका असर उसकी उत्पादकता तथा प्रजनन क्षमता पर पड़ता है। इसमें देसी गाय के लिए तुड़ी अथवा सूखे चारे की मात्रा 4 किलोग्राम तथा संकर गाय/भैंस के लिए यह मात्रा 4 से 6 किलोग्राम तक होती है। दाना मिश्रण की मात्रा स्थानीय देसी गाय के लिए 1 से 1.25 किलोग्राम तथा संकर गाय, या भैंस के लिए इसकी मात्रा 1.5 से 2.0 किलोग्राम रखी जाती है।

2. दुग्ध उत्पादन के लिए कितना आहार दें: दुग्ध उत्पादन के लिए पशु आहार की वह मात्रा जो पशु के जीवन निर्वाह के लिए दिए जाने वाले आहार के अतिरिक्त उसके दुग्ध उत्पादन के लिए दिया जाता है। इसमें स्थानीय गाय के लिए प्रति 2.5 किलोग्राम दुग्ध के उत्पादन के लिए जीवन निर्वाह आहार के अतिरिक्त एक किलोग्राम दाना देना चाहिए, जबकि संकर व देशी दुधारू गायों/भैंसों के लिए यह मात्रा प्रति 2 किलोग्राम दुध के लिए दी जाती है। यदि हरा चारा पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध है तो हर रोज 10 किलोग्राम अच्छे किस्म के हरे चारे को देकर एक किलोग्राम दाना कम किया जा सकता है। इससे पशु आहार की कीमत कुछ कम हो जाएगी और उत्पादन भी ठीक बना रहेगा। पशु को दुध उत्पादन तथा आजीवन निर्वाह के लिए साफ पानी दिन में कम से कम तीन बार जरूर पिलाना चाहिए।

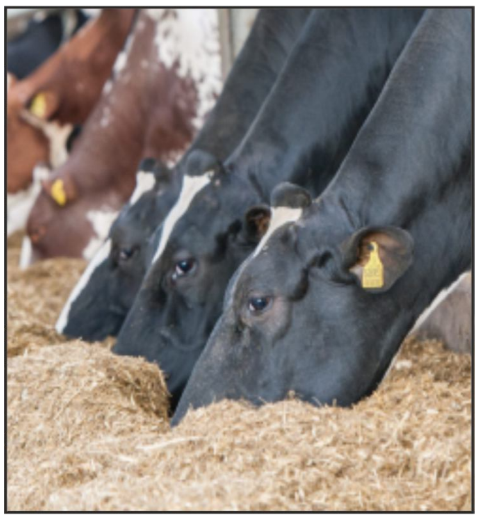

3. गर्भावस्था के लिए कितना आहार दें: पशु की गर्भावस्था में उसे 5वें महीने से अतिरिक्त आहार दिया जाता है, क्योंकि इस अवधि के बाद गर्भ में पल रहे बच्चे की वृद्धि बहुत तेजी के साथ होने लगती है। अत: गर्भ में पल रहे बच्चे की उचित वृद्धि व विकास के लिए तथा गाय व भैंस के अगले ब्यान्त में सही दुग्ध उत्पादन के लिए इस आहार को देना नितांत आवश्यक है। इसमें स्थानीय गायों के लिए 1 किलोग्राम तथा संकर नस्ल की गायों व भैंसें के लिए 1.5 किलोग्राम अतिरिक्त दाना दिया जाना चाहिए। अधिक दुध देने वाले पशुओं को गर्भावस्था में 8वें माह से अथवा ब्याने के 6 सप्ताह पहले उनकी दुग्ध ग्रंथियों के पूर्ण विकास के लिए इच्छानुसार दाने की मात्रा 3 से 4 किलोग्राम तक बढ़ा देनी चाहिए। यह मात्रा पशु की निर्वाह आवश्यकता के अतिरिक्त दिया जाना चाहिए इससे पशु अगले ब्यान्त में अपनी क्षमता के अनुसार अधिकतम दुग्धोत्पादन कर सकते है।

4. नवजात बछड़े को कितना आहार दें? : नवजात बछड़े को दिया जाने वाला सबसे पहला और सबसे जरूरी आहार है माँ का पहला दूध, अर्थात खीस। खीस का निर्माण माँ के द्वारा बछड़े के जन्म से 3 से 7 दिन बाद तक किया जाता है और यह बछड़े के लिए पोषण और तरल पदार्थ का प्राथमिकता स्रोत होता है। यह बछड़े को संक्रामक रोगों और पोषण संबंधी कमियों का सामना करने की क्षमता देता है। जन्म के बाद पहले तीन दिनों तक नवजात को खीस पिलाते रहना चाहिए। जन्म के बाद खीस के अतिरिक्त बछड़े को 3 से 4 सप्ताह तक माँ के दूध की आवश्यकता होती है। उसके बाद बछड़ा वनस्पति से प्राप्त मांड और शर्करा को पचाने में सक्षम होता है। आगे भी बछड़े को दुग्ध पिलाना पोषण की दृष्टि से अच्छा है, लेकिन यह आहार खिलाने की तुलना में महँगा होता है। ध्यान रखे हर समय साफ और ताजा पानी उपलब्ध रहे। बछड़े को जरूरत से ज्यादा एक ही बार में पीने से रोकने के लिए पानी को अलग-अलग बर्तनों में और अलग-अलग स्थानों पर रखें। बछड़े के आरंभिक आहार का तरल रूप है दलिया, यह दूध का विकल्प नहीं है। 4 सप्ताह की उम्र में बछड़े के लिए दूध की मात्रा धीरे-धीरे कम कर आहार के रूप में दलिया को दूध की जगह पर शामिल किया जा सकता है। 20 दिनों के बाद बछड़े को दूध देना पूरी तरह बंद किया जा सकता है, जौ, गेहूं और ज्वार जैसे आनाजों का इस्तेमाल भी इस दलिया मिश्रण में किया जा सकता है। बछड़े के मिश्रिम आहार में 10 भाग तक गुड़ का इस्तेमाल किया जा सकता है। यह अवश्य ध्यान में रखा जाना चाहिए कि नवजात बछड़े के लिए पौषकीय महत्व की दृष्टि से दुग्ध का कोई विकल्प नहीं है। हालांकि, दुग्ध के विकल्प का सहारा उस स्थिति में लिया जा सकता है जब दुग्ध की उपलब्धता बिल्कुल पर्याप्त न हो। नवजात बछड़ों को बीमारियों से बचाकर रखना उनकी आरंभिक वृद्धि के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण है और इससे उनकी मृत्यु दर कम होती है। बछड़े का नियमित निरीक्षण करें, उन्हें ठीक तरह से खिलाए और उनके रहने की जगह और परिवेश को स्वच्छ रखें ताकि भविष्य के लिए अच्छे नर व मादा पशु उपलब्ध हो सकें।

पशुपालक संतुलित दाना मिश्रण कैसे बनायें?: दाने के मिश्रण उचित अवयवों को ठीक अनुपात में मिलाकर बनाना चाहिए। इसके लिए पशुपालक स्वयं निम्नलिखित घटकों को दिए हुए अनुपात में मिलाकर संतोषजनक व संतुलित पशु दाना बना सकते है। खली (मूँगफली, सरसों, तिल, बिनौला, अलसी आदि की खली) 25-35 प्रतिशत मोटे आनाज (गेहूं, जौ, मक्का, ज्वार आदि) 25-35 प्रतिशत आनाज के अवशेष (चोकर, चुरी, चावल की फक आदि) 10-30 प्रतिशत, खनिज मिश्रण 2 प्रतिशत, आयोडीन युक्त नमक 1 प्रतिशत, विटामिन्स ए.डी-3 का मिश्रण 20-30 ग्राम प्रति 100 किलोग्राम।

संतुलित दाना मिश्रण के गुण व लाभ :

- यह स्वादिष्ट, पोष्टिक व ज्यादा पाचक होता है।
- अकेले खल, बिनौला या चने से यह सस्ता पड़ता है।
- पशुओं का स्वास्थ्य ठीक रखता है।
- दूध व घी में बढ़ोतरी करता है।
- पशु ब्यान्त नहीं मारती।
- पशु अधिक समय तक दूध देते है।
- बछड़े व बछियों को जल्द यौवन प्रदान करता है।
- बीमारी से बचने की क्षमता प्रदान करता है।

——— शेष पृष्ठ 3 की ———

सरसों के प्रमुख रोगों का प्रबंधन

जड़ गलन रोग

रोग लक्षण :- यह रोग फूल आने की अवस्था पर खेत में अधिक नमी होने पर फैलता है। इस रोग के प्रकोप से पौधे,

जड़े सड़ने के कारण मर जाते हैं। यह रोग इरविनिया नामक जीवाणु से फैलता है।

रोग प्रबंधन :- * स्वस्थ व प्रमाणित बीज का ही प्रयोग करें।

* उर्वरकों की अनुशंसित मात्रा का इस्तेमाल करें।

* रोग लक्षण दिखाई देते ही रोगग्रस्त पौधों को उखाड़कर नष्ट कर दें।

* रोग का प्रकोप बढ़ने पर टेट्रासाईक्लिन 100 पी.पी.एम. तथा कार्बेडाजिम 0.1 प्रतिशत की दर से घोल बनाकर फसल पर छिड़काव करें।

मृदुरोमिल आसिता/ तुलासिता रोग

रोग लक्षण :- आरंभ में छोटे-छोटे गोलाकार मटमैले भूरे या बैंगनी रंग के धब्बे पत्तियों की निचली सतह पर बनते हैं। ये आपस में मिलकर अनियमित आकार ग्रहण कर लेते हैं। इन्हीं धब्बों पर मटमैले सफेद या बैंगनी रंग की कवकीय वृद्धि दिखाई देती है। यह ठंडे व नम वातावरण में अधिक उग्र रूप से प्रकट होती हैं। इन धब्बों के ठीक ऊपर पत्ती की ऊपरी सतह पर पीले रंग के धब्बे दिखाई देते हैं। सूजे हुए पुष्पांगों पर मृदुरोमिल आसिता व सफेद रोली के मिश्रित लक्षण भी दिखाई देते हैं।

रोग प्रबंधन :- * फसल की समय पर बुवाई करें। (1-20 अक्तूबर तक)।

* स्वस्थ एवं प्रमाणित बीजों का उपयोग करें।

* बीज को मेटालेक्जिल (एप्रॉन 35 एस.डी.)/6 ग्राम प्रति कि.ग्रा. बीज की दरा से उपचारित कर बोयें।

* रोगग्रसित फसल अवशेषों को जला दें अथवा जमीन में गाड़ दें।

* फसल को खरपतवार-रहित रखें।

* फसल पर रोग लक्षण दिखाई देने पर रिडोमिल एम.जेड. 72/2 कि.ग्रा. प्रति 1000 लीटर पानी में घोल बनाकर छिड़काव करें। यदि आवश्यकता पड़े तो दूसार छिड़काव 15 दिनों बाद करें।

काला धब्बा रोग

रोग लक्षण :- यह रोग पौधों की निचली पत्तियों पर छोटे-छोटे गहरे भूरे रंग के बिंदु के रूप में प्रकट होते हैं। ये तेजी से बढ़कर एक सै.मी. तक के वृत्ताकार बड़े धब्बों का रूप ले लेता है। इन्हीं धब्बों पर सकेंद्री वलय भी बन जाते हैं। यह रोग तीव्र गति से बढ़कर ऊपर की पत्तियों, तनों व फल्लियों को ग्रसित करता है। ग्रसित फलियों के बीज भी प्रभावित होकर सिकुड़कर छोटे हो जाते हैं और अधिक उग्रता होने पर सड़ भी जाते हैं।

रोग प्रबंधन :- * स्वस्थ एवं प्रमाणित बीज बोयें।

* फसल को खरपतवार-मुक्त रखें।

* रोगग्रसित फसल अवशेषों को नष्ट कर दें।

* उर्वरकों की अनुशंसित मात्रा का ही प्रयोग करें।

* आईप्रोडियांन (रोवरॉल) अथवा मैंकोजेब (इन्डोथेन एम-45) / 2 कि.ग्रा. / हैक्टेयर की दर से 1000 लीटर पानी में घोल बनाकर बुवाई के 40 एवं 70 दिनों पर दो छिड़काव करें।

सरसों के बीजोपचार के लिए लहसुन का सत

लहसुन का 2 प्रतिशत सत तैयार करने के लिए 20 ग्राम लहसुन को मिक्सी या पत्थर की सिल पर बारीक पीसकर कपड़े से छानकर एक लीटर पानी में मिलाकर घोल तैयार करें। एक लीटर लहसुन का 2 प्रतिशत सत 5-7 कि.ग्रा. सरसों के बीजोपचार के लिए पर्याप्त है। इसके लिए बीज को 10-15 मिनट तक भिगोया जाता है। इसके उपरांत उपचारित बीज को छायादार जगह पर सुखाया जाता है। इससे बीज मशीन में बुवाई के लिए आसानी से निकल जाता है। छिड़काव के लिए भी इसी अनुपात में सत तैयार करके प्रयोग करें।

जायद में मूंगफली उत्पादन

सर्वेश कुमार और आर.सी. शर्मा, वैज्ञानिक, जवाहरलाल नेहरू कृषि विश्वविद्यालय, कृषि विज्ञान केन्द्र, जिला हरदा–**461331** (मध्य प्रदेश)

मूंगफली का वैज्ञानिक नाम एरेकिस हाईपोजिया है। यह एक दलहनी कुल की फसल है। यह सभी प्रकार की दालों में सर्वाधिक सूखा सहन करने वाली फसल है। इस फसल को तिलहन फसल समूह का राजा भी कहा जाता है। इसमें 46–55 प्रतिशत तक तेल

तथा 28–30 प्रतिशत तक प्रोटीन की उपलब्धता के कारण अन्य तिलहनी फसलों की तुलना में यह अधिक ऊर्जा प्रदान करती है। मूंगफली की पाचनशीलता लगभग 86.08 प्रतिशत तक होती हैं। इसमें विटामिंस एवं खनिज पदार्थ जैसे आवश्यक पोषक तत्व भी प्रचुर मात्रा में पाए जाते हैं। इन्हीं पोषक मानों के कारण मूंगफली को गरीबों का बादाम भी कहा जाता है। सर्द मौसम की यह मुख्य तिलहनी फसल है। मूंगफली की खेती सफलतापूर्वक उन सभी क्षेत्रों में की जा सकती हैं, जहां खरीफ मौसम में मूंगफली उगाई जाती हो तथा गर्मियों के मौसम में सिंचाई के उत्तम साधन उपलब्ध हो सकें।

मूंगफली एक अच्छे फसलचक्र वाली एवं भूमि को आच्छादित करने वाली फसल है। इसकी पैदावार मुख्यत: उष्ण कटिबंध या अर्धशुष्क क्षेत्रों में सरलता से की जा सकती है। इसको फसल-चक्र में लाने से वहां पर मृदाक्षरण एवं भूमि कटाव को एक निश्चित सीमा तक रोका जाना संभव है। यह फसल मृदा संरक्षण एवं जल संरक्षण को प्रोत्साहित करती हैं। इसकी जड़ों में नाईट्रोजन स्थिरीकरण करने वाले जीवाणु (नाईट्रोजन जाति) भी पाए जाते हैं। यह वायुमंडलीय नाईट्रोजन को भूमि में लगभग 200 कि.ग्रा. प्रति हैक्टेयर की दर से स्थिर करती हैं। इससे नाईट्रोजनयुक्त रासायनिक उर्वरकों की खपत घटती हैं, साथ ही इससे होने वाली हानियों से भी बचा जा सकता है।

मूंगफली की उन्नत किस्में

उन्नत बीज केवल शुद्ध किस्मों से प्राप्त होता है। स्वस्थ बीज से ही उत्तम फस्ल प्राप्त की जा सकती है, जो श्रेष्ठ उत्पादन दे सकती हैं। आधुनिक हरित क्रांति की सफलता का श्रेय भी उन्नत बीजों एवं किस्मों को दिया जाता है। उन्नत किस्मों के बीज आधुनिक कृषि का प्रमुख आधार हैं। इन किस्मों के बीजों की प्रति हैक्टेयर पैदावार प्रचलित देसी किस्मों के बीजों से कई गुना अधिक होती है। ये अधिक उत्पादकता के साथ-साथ प्रतिकूल आवश्यकताओं के प्रति अधिक सहनशील एवं प्रतिरोधी होते हैं।

संकर किस्मों का प्रयोग करते समय संतुलित उर्वरकों का उपयोग, उचित जल निकास एवं जल प्रबंध पर भी विशेष ध्यान देना चाहिए। अत: जायद में मूंगफली का आधुनिक तकनीकी से उत्पादन करने के लिए इसकी उन्नत किस्में इस प्रकार हैं:

सारणी–1 : मूंगफली में सिंचाई आवश्यकताएं

सिंचाई संख्या	अवधि	अवस्थाएं
प्रथम	बुवाई के 25-30 दिनों बाद	बढ़वार अवस्था पर
द्वितीय	बुवाई के 35-40 दिनों बाद	फूल निकलते समय
तृतीय	बुवाई के 45-50 दिनों बाद	सुइयां बनते समय
चौथी	बुवाई के 55-60 दिनों बाद	फल्लियां बनते समय
पांचवीं	बुवाई के 65-70 दिनों बाद	फल्लियां का विकास होते समय
छठी	बुवाई के 80-85 दिनों बाद	दाना पकते समय

टी.जी. 26 :- यह किस्म मध्य प्रदेश में रबी एवं जायद दोनों में बुवाई के लिए अच्छी है। यह 110-120 दिनों में तैयार हो जाती है। उपज 16-18 क्विंटल प्रति हैक्टेयर देती है। इसमें 49 प्रतिशत तेल पाया जाता है। इसमें तेल की मात्रा 50-55 प्रतिशत तक होती है। यह लगभग 130-135 दिनों में पककर तैयार हो जाती है।

जे.जी.एन.-3 :- यह किस्म मध्य प्रदेश में जायद में बुवाई के लिए एवं सूखारोधी है। लगभग सभी प्रकार की मृदाओं से अच्छा उत्पादन देने वाली है। यह किस्म कुल 90-100 दिनों में पककर तैयार होती है। इसमें 50 प्रतिशत तेल पाया जाता है। इसका उत्पादन 15-17 क्विंटल फल्लियां प्रति हैक्टेयर हैं।

टी.ए.जी.-24 :- यह मूंगफली की गुच्छेदार किस्म हैं। जायद की बुवाई के लिए नई सर्वोत्तम किस्म है। इसकी पैदावार 30-35 क्विंटल प्रति हैक्टेयर तक होती हैं। साथ ही कम समय में पक्कर तैयार हो जाती हैं। इसमें तेल की मात्रा 40 से 50 प्रतिशत तथा फल्लियों में दाने का अनुपात 65 प्रतिशत होता है।

एस.बी.-11 :- यह किस्म खरीफ व जायद दोनों मौसम में उगाई जाती हैं। खरीफ की अपेक्षा जायदा अधिक उपज देती है। इसमें तेल की मात्रा 49-50 प्रतिशत होती हैं। इस में यह किस्म की औसत उपज 25-30 क्विंटल प्रति हैक्टेयर है।

डी.ए.-86 :- यह झुमका किस्म जायद के लिए उपयुक्त है। इसकी औसत उपज 30-35 क्विंटल प्रति हैक्टेयर तक होती हैं। यह किस्म 120-125 दिनों में पककर तैयार होती है। इसके दानों में तेल की मात्रा लगभग 48 प्रतिशत होती हैं। फल्लियों में दानों का अनुपात 64-65 प्रतिशत तक होता है।

खेत की तैयारी

जलवायु :- इसकी खेती के लिए लगभग 70-90° फारेनहाइट तापमान एवं ठंडी रात फसल परिपक्वता के समय तथा वार्षिक वर्षा 50-125 सैं.मी. होनी चाहिए।

मृदा एवं जुताई :- मूंगफली की फल्लियां भूमि के अंदर विकसित होती हैं। इसकी फसल के लिए अच्छे जल निकास वाली, भुरभुरी दोमट एवं रेतीली दोमट, कैल्शियम और मध्यम जैव पदार्थो से युक्त मृदा उत्तम रहती हैं। इस फसल के लिए मृदा का पी-एच मान 5-8.5 तक उपयुक्त रहता है। सामान्यत: 12 से 15 सैं.मी. तक गहरी जुताई अच्छी रहती हैं। गहरी जुताई करने से इसकी अच्छी रहती हैं। गहरी जुताई करने से इसकी जड़ें जमीन में काफी गहरी चली जाती हैं। इससे खुदाई में काफी परेशानी आती है। एक जुताई मिट्टी पलटने वाले हल से फिर देसी हल या हैरो से 2-3 जुताई करके खेत को बुवाई के लिए समतल कर लेना चाहिए।

भूमि उपचार :- मूंगफली की फसल में मुख्यत: सफेद लट, दीमक, शीर्ष गलन रोग एवं पत्ती धब्बा रोग इत्यादि का प्रकोप अधिक होता है। इसलिए अंतिम जुताई के समय फोरेट-10 जी या कार्बोफ्यूरॉन, हेप्टाक्लोर आदि से 25 कि.ग्रा. प्रति हैक्टेयर की दर से मृदा को उपचारित कर लेना चाहिए। दीमक का प्रकोप कम करने के लिए खेत की पूरी सफाई जैसे सूखे डंठल एवं कच्ची खाद आदि को खेत से हटा देना अत्यंत जरूरी होता है।

बीज की मात्रा एवं बुवाई :- जायद मूंगफली की बुवाई के लिए सबसे उपयुक्त समय फरवरी के द्वितीय सप्ताह से मार्च के दूसरे सप्ताह तक होता है। झुमका किस्म की बीज दर 100 कि.ग्रा. प्रति हैक्टेयर है। इसके अलावा विस्तारी एवं अर्ध विस्तारी किस्मों के लिए 60-80 कि.ग्रा. बीज प्रति हैक्टेयर की दर से बुवाई करनी चाहिए। झुमका किस्म में कतार से कतार की दूरी 30 सैं.मी. एवं पौधों से पौधों के बीच में दूरी 10 सैं.मी. रखी जाती हैं। विस्तारी एवं अर्ध विस्तारी किस्मों के लिए कतार से कतार की दूरी 45 सैं.मी. एवं पौधों से पौधों की दूरी 15 सैं.मी. उपयुक्त रहती है।

बीजोपचार :- कृषि उत्पादन की मूलभूत इकाई बीज ही है। बीज का उत्पादन एवं उत्पादकता पर सीधा प्रभाव पड़ता है। अत: किसानों को सदैव प्रमाणित बीज ही खरीदकर बोने चाहिए। बीज को कवक एवं जीवाणु इत्यादि के प्रभाव से बचाने के लिए क्रमश: कवकनाशी (2.5 ग्राम थाईरम या कार्बेडाजिम या 2 ग्राम मेंकोजेब से प्रति कि.ग्रा. बीज की दर) से, कीटनाशी (एक लीटर क्लोरोपायरीफॉस 20 ई.सी. से प्रति 40 कि.ग्रा. बीज की दर) से तथा अंत में राईजोबियम कल्चर एवं फॉस्फेट विलेय जीवाणु कल्चर से उपचारित करना चाहिए।

उर्वरक :- मूंगफली एक दलहनी फसल हैं। इसलिए नाईट्रोजन की कम मात्रा की जरूरत होती है। 20-30 कि.ग्रा. नाईट्रोजन, 50-60 कि.ग्रा. फॉस्फोरस एवं 30-40 कि.ग्रा. पोटाश का प्रति हैक्टेयर की दर से उपयोग करना चाहिए। फॉस्फोरस, पोटाश एवं आधी मात्रा नाईट्रोजन की भूमि में अंतिम जुताई के साथ लाईनों में बुवाई कर देनी चाहिए।

नाईट्रोजन :- नाईट्रोजन से पौधों की वानस्पतिक वृद्धि तेजी से होती हैं एवं यह पर्णहरित क्लोरोफिल व प्रोटीन निर्माण में मुख्य योगदान करता है। मूंगफली में 20 कि.ग्रा. नाईट्रोजन प्रति हैक्टेयर देते हैं। नाईट्रोजन के मुख्य स्त्रोत किसान खाद, अमोनियम सल्फेट, यूरिया इत्यादि हैं। नाईट्रोजन की पूर्ति के लिए मूंगफली में अमोनियम सल्फेट अधिक उपयुक्त होता है।

फॉस्फोरस :- दलहनी कुल की फसलों के लिए फॉस्फोरस एवं आवश्यक तत्व होता है। इससे जड़ों में पाई जाने वाली ग्रंथियों का विकास होता है। यह फल एवं बीज के निर्माण में भी सहायक होता है। सिंगल सुपर फॉस्फेट मूंगफली की फसल के लिए अच्छा पोषण स्त्रोत है। मूंगफली में 60 कि.ग्रा. फॉस्फोरस पेन्टा ऑक्साईड प्रति हैक्टेयर देते हैं।

पोटाश :- पोटाश राईजोबियम जीवाणु को भोजन प्राप्त करवाने में सहायक होता है। यह नाईट्रोजन की अधिकता के प्रतिकूल प्रभाव को भी रोकता है। पोटाश से बीजों का वजन बढ़ता है। बीज चमकीले एवं सुडौल बनते हैं। सल्फेट ऑफ पोटाश इसका अच्छा स्त्रोत हैं।

कैल्शियम :- मूंगफली की फसल में कैल्शियम का उत्पादन पर काफी प्रभाव पड़ता है। कैल्शियम से फली में दानों का पूर्ण विकास होता है। जिप्सम इसका महत्वपूर्ण स्त्रोत है, इससे मृदा का पी-एच भी संतुलित होता है।

क्रमश:

पशु रोग निदान में जांच प्रयोगशालाओं की भूमिका

हरियाणा एक कृषि प्रधान देश है। ग्रामीण क्षेत्रों में रहने वाली दो तिहाई में अधिक आबादी कृषि के साथ-साथ पशुपालन का कार्य करती हैं। इसलिए पशुपालन के बिना कृषि अधूरी है। आज हमारे प्रदेश में अच्छी नस्ल की गाय व भैंस पाली जाने लगीं हैं। हरियाणा प्रदेश में 90 लाख के पशुधन में भैंसों की संख्या 60 लाख तथा गाय 15 लाख है। पशुपालन हामरे प्रदेश में एक अच्छे व्यवसाय के रूप में उगर रहा है। स्वस्थ पशुओं से पशुपालक पूरा उत्पादन व भरपूर आर्थिक लाभ प्राप्त करते है, परन्तु यह हर समय संभव नहीं है। प्राय: देखा गया है कि पालतू पशु किसी न किसी बीमारी से ग्रस्त हो जाते है व उचित जांच सुबिधा न मिलने के कारण पशुपालक को अनावश्यक खर्च उठाना पड़ता है और रोग भी ठीक नहीं हो पाता है। हमारे प्रदेश में लाला लाजपतराय पशु चिकित्सा एवं पशु विज्ञान विश्वविद्यालय एवं इसकी सहायक पशु निदान प्रयोगशालाओं में अधिकांश रोगों के कारणों की जांच सुविधा उपलब्ध हो गयी है, लेकिन ग्रामीण क्षेत्रों में इसकी जानकारी के अभाव में लाखों रूपये मूल्य के पशु प्रतिवर्ष मर जाते है। अत: पशुपालक अपने पशुओं के विधिवत ईलाज के लिए मनुष्यों की भांति पशुओं के विभिन्न प्रकार के नमूनों की जांच पशु रोग निदान प्रयोगशालाओं में करवा सकते हैं। इस उद्देश्य से यह लेख प्रस्तुत किया हो रहा है।

क्यों जांच की आश्यकता :- मूक पशु अपनी बीमारी के विषय में स्वयं नहीं बता सकता, ऐसे में प्रयोगशाला जांच का महत्व काफी बढ़ जाता है। इससे बीमारी जांच करने के बाद शीघ्र उचित ईलाज संभव है।

- रोग की जांच होने से उचित उपचार संभव है, जिससे पशुपालक अनावश्यक खर्च से बच सकता है।
- संक्रामक रोगों की जांच कर स्वस्थ पशुओं में फैलने से रोका जा सकता है। कई बार ये रोग पूरे गांव में फैल जाता है।
- नये पशु खरीदने पर अगर उसे बीमारी है तो जांच कर स्वस्थ पशु से अलग कर सकते हैं।
- नियमित जांच कर टीकाकरण के प्रभाव का पता सुनिश्चित किया जा सकता है।
- कई प्रकार की बीमारी ऐसी हैं, जो पशुओं से मनुष्य में हो सकती हैं। अत: शीघ्र जांच से उन रोगों पर नियंत्रण के उपाय अपनाकर मनुष्यों का बचाव किया जा सकता है।
- मृत पशु के नमूने की जांच कर उसके मृत्यु के कारणों की पुष्टि की जा सकती है।

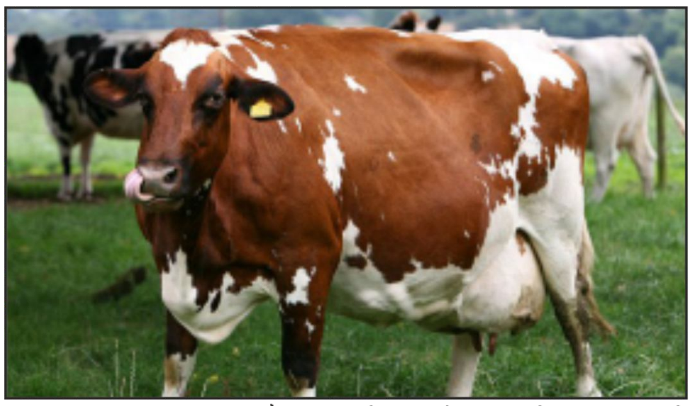

कब करवाएं जांच :- जब भी पशुपालक नया पशु खरीदें तो उसकी प्रारंभिक जांच अवश्य करवाएं।

- पशु के व्यवहार में बदलाव आने लगे, दूध उत्पादन कम होने पर।
- पशु खाना-पीना कम करे, उठने-बैठने में कठिनाई महसूस करे।
- पशु में बीमारी के लक्षण जैसे बुखार, दस्त, अफारा, कब्ज, दर्द आदि दिखाई दे।

कैसे करवाएं जांच :-(नमूने भेजने का तरीका व सावधानियां)

- पशुपालक अपने नजदीकी राजकीय पशु चिकित्सक से सम्र्पक करे, जो पशु के उपयुक्त नमूने जैसे रक्त, मूत्र, गोबर, दूध आदि लेकर प्रयोगशाला में भिजवा सकते है।
- गोबर की जांच के लिए पशुपालक स्वयं भी गोबर का नमूना साफ कागज की पुड़िया या डिब्बी में लेकर परजीवी की जांच के लिए प्रयोगशाला में ला सकते हैं।
- मूत्र की जांच के लिए ताजा मूत्र का नमूना लें। सुबह पशु का मूत्र साफ किसी शीशी या ट्यूब में एकत्रित करें।
- यदि पशु को थनैला रोग से पीड़ित होने की आशंका हो तो गर्म पानी में उबली हुई शीशी में नमूना एकत्र कर प्रयोगशाला में लेकर जाएं।
- रक्त का नमूना दवाई (ई.डी.टी.ए.) डली हुई शीशी में लेकर जाए अन्यथा रक्त जम जागा, जिससे जांच संभव नहीं है।
- गर्भपात के भ्रूण को प्लास्टिक पालीथीन में अच्छी तरह बंदकर प्रयोगशाला में भेजें।
- यदि पशु में विषक्तता / जहरबाद जोने की संभावना लगती है तो पशुपालक पशु के चारें का नमूना लेकर प्रयोगशाला में भेज सकते हैं।
- पशुओं में व्यापक रूप से फैली बीमारी की स्थिति में पशुपालक रोग निदान प्रयोगशाला में अधिकारियों को सम्र्पक करें या उनके पास ग्रस्त पशुओं के नमूने भेजें।

जांच के लिए एकत्रित किए गए नमूने बंद शीशी, बोतल या ट्यूब में रखें व उस पर संपूर्ण जानकारी का विवरण दे, जैसे नमूने का प्रकार, संख्या, पशुपालक का नाम/पता लिखें।

- इस बात का उल्लेख करें की कौन सी जांच करवानी है। रोग लक्षण, इतिहास, उपचार आदि का विवरण।

ज़ेर का समय पर बाहर ना आना

प्राय: प्रसव के बाद छ: घंटों में ज़ेर/सल बाहर आ जाती है। यदि ज़ेर 8-12 घंटों में भी बाहर ना आए तो इसे रिटेनड प्लेसेंटा कहते है। भारतीय परिस्थितियों में यह एक बड़ी समस्या है। पशु-पालकों द्वारा इसे हलके रूप से लेने, खुद या नीम हकीमों द्वारा गंदे हाथों से ज़ेर बाहर निकालने तथा बाद में गर्भाशय में इन्फेक्शन हो जाने से दूध उत्पादन में बहुत कमी आ जाती है। इसके कारण हालत अधिक बिगड़ने व अन्य रोग हो जाने से काफी पशु बांझ हो जाते है। इसलिए रिटेनड प्लेसेंटा के दौरान वैज्ञानिक तरीके से इलाज किया जाना बहुत ज़रूरी है।

यह समस्या अन्य प्रजातियों की तुलना में गाय/भैंसों में अधिक होती है। जिन इलाकों में ब्रुसेलोसिस रोग अधिक होता है, वहां रिटेंशन ऑफ प्लेसेंटा अधिक होता है।

लक्षण : * ज़ेर का कुछ भाग वलवा से बाहर लटका हुआ नज़र आता है। ऐसे में पशु-पालक से अच्छी तरह से पूछताछ करनी चाहिए।

* यदि ज़ेर गिरने की कोई हिस्ट्री नहीं है, तो ऐसे में या तो वो पूरी तरह से अंदर है, या गाय/भैंस द्वारा मुंह से खींच कर बाहर निकाल कर खाई जा सकती है या गिरने के बाद खाई जा सकती है।

* यदि हल्का ही इन्फेक्शन हुआ है तो तापमान, पल्स, भूख लगना तथा दूध उत्पादन सामान्य रहता है। मात्र 25 प्रतिशत पशुओं में इस समस्या के कारण टोक्सिमिया, सेप्टीसीमिया और बक्टेरिमिया होता है। साधारण केस में, हल्का लटकता हुआ प्लेसेंटा का रंग सामान्य होता, गीला व चिकना होता है। साफ कांच की तरह का म्यूकस रस्सी की तरह लटका हुआ देखा जा सकता है।

* गंभीर केस में जब ज़ेर गिरे हुए समय अधिक हो गया हो, पशु बार-बार ज़ेर गिराने के लिए ज़ोर लगाता है, ज्वर हो, पल्स बढ़ी हो, दूध में कमी हो, आहार नहीं ले रहा हो, लटकती हुई ज़ेर का रंग बदल गया हो, इन्फेक्शन के कारण बदबूदार डिस्चार्ज भी आ रहा हो, तो ऐसे में पशु की चिंताजनक स्थिति हो जाती है।

* पशु के बैठने या लेटने से ज़ेर का कुछ भाग बाहर आ जाता है। ऐसे में ज़मीन पर लगी हुई गंदगी लटकी हुई ज़ेर पर चिपक जाती है, जब पशु वापिस खड़ा होता है, तो गंदगी लगी हुई ज़ेर का भाग खीचाव के कारण वापिस अंदर चला जाता है। इससे इन्फेक्शन आसानी से अंदर पहुंच जाता है। ऐसे में ज़ेर में सूजन आ जाती है।

* प्रसव के 24 घंटे बाद अंदर रही ज़ेर का सड़ना शुरू हो जाता है। 48-72 घंटे के बाद सर्विक्स के सिकुड़ने से रास्ता बंद हो जाता है।

इलाज : क्या इलाज किया जाए, यह परिस्थिति पर निर्भर करता है :

* हाथ से ज़ेर निकालना।
* सिर्फ लोकल इंट्राउटेराइन एंटीबायोटिक्स या एंटीबायोटिक्स इंजेक्शन देना।
* सिर्फ हार्मोन इंजेक्शन, एंटीबायोटिक बिना या एंटीबायोटिक के साथ देना।

हाथ से ज़ेर निकालना : * खुद को इन्फेक्शन से बचाव के लिए हाथों पर स्लीव पहनें।

* ज़ेर हाथ से निकालने में जलदबाजी ना करें और पहले इंतजार कर 24-72 घंटों के बीच ही निकालने का फैसला करें।
* वलवा व आस-पास के भाग को साबुन/हलके एंटीसेप्टिक घोल से अच्छी तरह धोएं।
* हाथ से ज़ेर को बहुत ही हलके ढंग से अलग करें। अधिक खींचने या तोड़ने जैसी स्थिति ना करें। ऐसा करने से ब्लीडिंग हो सकती है।
* जब एक बार ज़ेर निकालने के लिए हाथ अंदर डाल देते हैं, तो बार-बार बाहर ना निकालें। इससे वेजाइना और गर्भाशय में घाव हो सकते हैं तथा गर्भाशय में हवा भी भर जाती है। इसके अलावा अंदर इन्फेक्शन होने की संभावना भी बढ़ जाती है।
* यदि वेजाइना में घाव, लेसरेशन हो तो ज़ेर को हाथ से ना निकालें।
* जब ज़ेर का कुछ भाग बाहर लटका हुआ हो तो इन्फेक्शन अंदर जाने की संभावना रहती है। इसलिए वलवा के नीचे लगभग आधा फीट भाग को छोड़ कर बाकी काट दें।
* ज़ेर अलग करने व निकालने में अधिक समय नहीं लगाना चाहिए। इसके लिए 20 मिनट से अधिक समय ना लगाएं।
* ग्रामीण इलाकों में कुछ लोग लटकी हुई ज़ेर पर ईंट का भार बांध देते हैं, ताकि वज़न से ज़ेर बाहर आ सके लेकिन इस तरीके से ज़ेर पूरी तरह से अलग नहीं होती है और टूट कर बाहर आ जाती है। इसलिए यह तरीका सही और वैज्ञानिक नहीं है।
* हाथ से ज़ेर निकालने के बाद कम से कम 5 दिन तक एंटीबायोटिक्स का प्रयोग करें।

हार्मोनल ट्रीटमेंट : अलग-अलग हार्मोन के प्रयोग पर विशेषज्ञों की राय अलग है। पहले एस्ट्रोजन हार्मोन का प्रयोग किया जाता था, लेकिन इसके प्रयोग के कारण भैंसों का दूध एकाएक कम हो जाता है। ऐसा भी माना जाता है कि ज़ेर को अलग करने में यह कोई खास मदद नहीं कर पाता है।

ऑक्सीटोसिन : * ऑक्सीटोसिन को प्रसव के समय और तुरंत बाद प्रयोग किया जाना लाभप्रद है, जबकि प्रसव के 1-2 दिन बाद प्रयोग करने पर लाभ होने की संभावना नहीं रहती है।

* यदि प्रसव के समय या बाद में ऑक्सीटोसिन के साथ $PGF_{2\alpha}$ का प्रयोग किया जाए तो ज़ेर आसानी से बाहर आ जाती है।

हर्बल ट्रीटमेंट : कुछ हर्बल प्रोडक्ट्स को प्रसव के बाद देने से ज़ेर आसानी से गिर जाती है तथा गर्भाशय की सफाई भी हो जाती है।

नेचुरल ट्रीटमेंट : प्रसव के 9-10 दिन बाद कोटीलेडंस स्वत: ही सिकुड़ कर सामान्य आकार में आ जाते हैं। 10 दिन के बाद माँ व बच्चे के ज़ेर बीच कोई जुड़ाव नहीं रह पाता है।

जनरल ट्रीटमेंट : फ्लूइड थेरेपी, इंजेक्शन कैल्शियम बोरोग्लुकोनेट।

सूखा सहने वाली गन्ने की नई किस्म किसानों के लिए उम्मीद

जलवायु परिवर्तन के प्रभाव अब खेती में साफ दिखाई देने लगे हैं और पानी सबसे बड़ी चुनौती बनकर उभरा है। कहीं बारिश समय पर नहीं होती, तो कहीं भूजल स्तर तेजी से नीचे जा रहा है, वहीं बढ़ती गर्मी फसलों पर अतिरिक्त दबाव डाल रही है। गन्ने जैसी फसल, जिसे लंबे समय तक नियमित सिंचाई चाहिए, इन परिस्थितियों में किसानों के लिए जोखिम भरी बनती रही है।

इसी चुनौती के बीच गन्ना प्रजनन संस्थान, क्षेत्रीय अनुसंधान केंद्र, करनाल द्वारा गन्ने की एक नई और उन्नत किस्म कर्ण-18 विकसित की गई है। यह किस्म दिखाती है कि सीमित पानी के बावजूद भी गन्ने की खेती संभव है। किसानों के लिए यह केवल एक नई किस्म नहीं, बल्कि भविष्य में टिकाऊ खेती की ओर बढ़ने की एक ठोस उम्मीद बनकर उभरी है।

बदलते मौसम में गन्ने की खेती की चुनौती

पिछले कुछ वर्षों में कई गन्ना उत्पादक क्षेत्रों में पानी की स्थिति लगातार कमजोर होती चली गई है। नहर आधारित इलाकों में समय पर सिंचाई न मिलना आम समस्या बन गई, जबकि भूजल पर निर्भर किसानों को हर साल नीचे जाते जलस्तर का सामना करना पड़ा। इस अनिश्चित माहौल ने खेती की योजना बनाना मुश्किल कर दिया और जोखिम बढ़ा दिया।

पानी की इस कमी का सीधा असर गन्ने की खेती पर पड़ा। कई किसानों को मजबूरी में गन्ने का रकबा घटाना पड़ा, तो कुछ ने बढ़ते खर्च और जोखिम को देखते हुए फसल बदलने का फैसला किया। इन्हीं परिस्थितियों में लंबे समय से ऐसी गन्ने की किस्मों की जरूरत महसूस की जा रही थी, जो कम पानी में भी टिकाऊ और भरोसेमंद उत्पादन दे सकें।

सूखा सहने वाली नई किस्म क्या खास बनाती है

नई विकसित गन्ने की किस्म को ऐसे क्षेत्रों को ध्यान में रखकर तैयार किया गया है, जहां पानी की कमी आम चुनौती बन चुकी है। इसकी जड़ प्रणाली जमीन के भीतर गहराई तक फैलती है, जिससे पौधा मिट्टी में मौजूद नमी का अधिक प्रभावी उपयोग कर पाता है। इसी कारण सीमित सिंचाई में भी पौधों पर पानी के तनाव के लक्षण कम दिखाई देते हैं और फसल की बढ़वार संतुलित बनी रहती है।

यह किस्म केवल सूखे हालात में जीवित रहने तक सीमित नहीं है, बल्कि इसे इस तरह विकसित किया गया है कि उत्पादन और गुणवत्ता दोनों में स्थिरता बनी रहे। बेहतर बढ़वार और भरोसेमंद उपज क्षमता के चलते इसे आने वाले समय की खेती के लिए एक मजबूत और भविष्य के अनुकूल विकल्प माना जा रहा है।

कम पानी में भी स्थिर उपज की संभावना

सूखा सहने वाली गन्ने की किस्म की सबसे बड़ी खासियत यही है कि पानी की कमी इसका हौसला नहीं तोड़ती। जहां सामान्य किस्में सूखे हालात में जल्दी कमजोर पड़ जाती हैं और उपज पर सीधा असर दिखने लगता है, वहीं यह नई किस्म सीमित नमी में भी अपनी बढ़वार बनाए रखती है। परिणामस्वरूप उत्पादन में अचानक गिरावट नहीं आती और फसल ज्यादा भरोसेमंद बनी रहती है।

इस स्थिरता से किसान को दो तरह से लाभ मिलता है। कम सिंचाई की जरूरत होने से पानी और ऊर्जा पर होने वाला खर्च घटता है, और साथ ही पैदावार में बड़े उतार-चढ़ाव का जोखिम भी कम हो जाता है। ऐसे दौर में, जब पानी एक महंगा और सीमित संसाधन बन चुका है, यह गुण गन्ने की खेती को आर्थिक रूप से ज्यादा सुरक्षित और संतुलित बनाता है।

छोटे और सीमांत किसानों के लिए खास अवसर

छोटे और सीमांत किसानों के लिए सिंचाई आज भी सबसे बड़ी चुनौती बनी हुई है। सीमित ट्यूबवेल, बढ़ता डीजल खर्च और अनियमित बिजली आपूर्ति खेती की लागत को तेजी से बढ़ा देते हैं। ऐसे हालात में सूखा सहने वाली गन्ने की नई किस्म छोटे किसानों के लिए राहत का रास्ता खोलती है।

इस किस्म को बार-बार सिंचाई की जरूरत नहीं पड़ती, जिससे खेती पर होने वाला कुल खर्च कम होता है और फसल खराब होने का जोखिम भी घटता है। यही वजह है कि अब गन्ना उन किसानों के लिए भी एक व्यावहारिक विकल्प बन सकता है, जो अब तक पानी की कमी के कारण इसे उगाने से बचते रहे थे। यह बदलाव छोटे किसानों को गन्ने की खेती से जोड़ने की दिशा में एक अहम कदम है।

टिकाऊ खेती की दिशा में बड़ा कदम

2026 में खेती की दिशा साफ तौर पर बदल रही है। अब लक्ष्य केवल ज्यादा पैदावार लेना नहीं है, बल्कि पानी, मिट्टी और ऊर्जा जैसे सीमित संसाधनों का समझदारी से उपयोग करना भी उतना ही जरूरी हो गया है। सूखा सहने वाली गन्ने की नई किस्म इसी सोच को जमीन पर उतारती है और दिखाती है कि उत्पादन और संरक्षण साथ-साथ चल सकते हैं।

कम पानी में भी स्थिर उपज देने वाली ऐसी किस्में जल बचत के प्रयासों को मजबूती देती हैं। जब किसान कम सिंचाई में अच्छी फसल उगा पाता है, तो भूजल पर अनावश्यक दबाव नहीं पड़ता। इसका फायदा केवल एक खेत तक सीमित नहीं रहता, बल्कि पूरे इलाके में जल संतुलन और भविष्य की जल सुरक्षा को मजबूत करने में मदद मिलती है।

नई किस्म और आधुनिक तकनीक का संयोजन

इस नई गन्ना किस्म की पूरी क्षमता तब सामने आती है, जब इसे आज की समझदार खेती तकनीकों के साथ अपनाया जाता है। ड्रिप सिंचाई से पौधों को जरूरत भर पानी मिलता है, मल्चिंग मिट्टी में नमी को लंबे समय तक बनाए रखती है, और संतुलित पोषण प्रबंधन फसल की बढ़वार को स्थिर रखता है। इन उपायों के साथ यह किस्म अपने सबसे अच्छे परिणाम दिखाती है।

कम पानी में पनपने वाली किस्म और सूक्ष्म सिंचाई का मेल खेती को अधिक नियंत्रित और व्यवस्थित बनाता है। पानी की बर्बादी रुकती है, खाद सीधे जड़ों तक पहुंचती है और श्रम की जरूरत भी घटती है। इस तरह किसान कम संसाधनों में बेहतर उत्पादन ले पाता है, जो खेती को आर्थिक और पर्यावरणीय दोनों दृष्टि से ज्यादा लाभकारी बनाता है।

गन्ने के भविष्य को लेकर बढ़ता भरोसा

चीनी तक सीमित रहने वाली गन्ने की खेती अब काफी आगे बढ़ चुकी है। एथेनॉल, गुड़ और बायो-एनर्जी जैसे क्षेत्रों में बढ़ती जरूरत ने गन्ने को आने वाले समय की रणनीतिक फसल बना दिया है। यही बढ़ती मांग गन्ने के भविष्य को मजबूत बनाती है, लेकिन यह मजबूती तभी कायम रह सकती है जब फसल मौसम की अनिश्चितता को सहने में सक्षम हो।

सूखा सहने वाली नई किस्म इसी भरोसे को आगे बढ़ाती है। यह दिखाती है कि गन्ने की खेती केवल भरपूर पानी पर निर्भर रहने वाली प्रक्रिया नहीं है। सही वैज्ञानिक दृष्टिकोण, शोध और नवाचार के सहारे गन्ना बदलते हालात में भी टिक सकता है और किसानों को स्थिर अवसर देता रह सकता है। यही सोच गन्ने की खेती को भविष्य के लिए ज्यादा सुरक्षित और भरोसेमंद बनाती है।

सूखा सहने वाली गन्ने की नई किस्म केवल एक तकनीकी उपलब्धि नहीं है, बल्कि बदलते कृषि परिदृश्य में किसानों के लिए आशा का संकेत है। यह किस्म कम पानी, कम जोखिम और स्थिर आय की दिशा में एक मजबूत कदम है।

2026 और उसके बाद के वर्षों में, जब जल संकट और जलवायु अनिश्चितता और बढ़ेगी, तब ऐसी किस्में गन्ने की खेती को टिकाऊ बनाए रखने में अहम भूमिका निभाएंगी। सही जानकारी, उचित तकनीक और समझदारी भरे फैसलों के साथ यह नई किस्म किसानों के लिए वास्तव में उम्मीद की फसल बन सकती है।

किसानों के लिए पंजाब खेतीबाड़ी यूनिवर्सिटी ने जारी की विशेष एडवाइजरी

खेतों में जलभराव से बचने को करें सही जल निकासी व्यवस्था वरना सड़ जाएंगी फसलें

पश्चिमी विक्षोभ के अचानक सक्रिय होने से मौसम फिर बदल गया है। विगत् दिवस प्रदेश के अधिकांश हिस्सों में हल्की से मध्यम बारिश से कई जगह आलू समेत रबी की फसलों में पानी जमा हो गया। आगामी दिनों में मौसम के तेवरों को देखते हुए पी.ए.यू. ने विशेष एडवाइजरी जारी की। इसके अनुसार वे फिलहाल सिंचाई, कीटनाशक छिड़काव, उर्वरक प्रयोग जैसी कृषि गतिविधियां रोक दें।

इसके अलावा वर्षा से पहले विपणन योग्य सब्जियां और फलों की कटाई कर लें। खेतों में जलभराव से बचने को उचित जल निकासी व्यवस्था रखें। यदि संभव हो तो अधिक मूल्य वाली फलदार सब्जियों और फलों के पौधों में ओलावृष्टि से बचाव के लिए जाली का प्रयोग करें।

मोगा के ज़िला कृषि अधिकारी डॉ. गुरप्रीत सिंह के अनुसार 25 मिलीमीटर बारिश गेहूं के लिए बेहद फायदेमंद है। जिन खेतों में खाद डालनी है, वे मौसम साफ होने के बाद ही यूरिया या नाइट्रोजन खाद डालें। फिरोज़पुर के कृषि अधिकारी एस.पी. सिंह ने चेतावनी दी, यदि आने वाले दिनों में ओलावृष्टि होती है, तो सरसों और सब्ज़ी की फसलों को नुकसान हो सकता है। कृषि अधिकारी डॉ. राकेश ने बताया कि पानी भरा रहने पर सब्ज़ियों में सड़न रोग का खतरा हो सकता है।

देश में 652.3 लाख हैक्टेयर में रबी फसलों की खेती

देश भर में रबी सीज़न 2025-26 के दौरान 652.3 लाख हैक्टेयर में रबी फसलों की खेती की जा रही है। इसमें 334.1 लाख हैक्टेयर में गेहूं की खेती है, जिसमें पिछले रबी सीज़न से 0.61 लाख हैक्टेयर की बढ़ोत्तरी हुई है। मौसम अनुकूल रहने पर इस बार भी अच्छी फसल होगी। 2021-22 में 304.59 लाख हैक्टेयर, 2022-23 में 314.01, 2023-24 में 318.33, 2024-25 में 328.04 लाख हैक्टेयर में गेहूं की खेती हुई थी।

आलू की फसल लगभग तैयार : डॉ. राकेश

विगत् दिवस की बारिश को रबी सीज़न की मुख्य फसलों के लिए बेहद सही समय पर है। तापमान में आई गिरावट गेहूं जैसी फसलों के लिए काफी अनुकूल है। प्याज़, लहसुन, गोभी, पालक, मेथी, मूली जैसी सब्ज़ियों के लिए भी यह बारिश फायदेमंद है। इससे पौधों में पत्तों का विकास बेहतर होगा। यदि खेतों में पानी लंबे समय तक भरा रहता है, तो जड़ सड़ने और रोग लगने का खतरा बढ़ सकता है। आलू की फसल लगभग तैयार है। कृषि अधिकारी डॉ. राकेश के अनुसार, यदि खेतों में सही जल निकासी नहीं है और पानी जमा हो जाता है, तो आलू की त्वचा (स्किन) खराब हो सकती है।

दामला के किसान धर्मवीर को राष्ट्रपति व केन्द्रीय कृषि मंत्री साइंटिस्ट अवॉर्ड से कर चुके सम्मानित

पाउडर से तैयार होगी लस्सी, किसान ने बनाई मल्टीपर्पज मशीन

विभिन्न खोजों और किसानों के फायदे की बात करने पर राष्ट्रपति के 21 दिन तक मेहमान रह चुके यमुनानगर के दामला निवासी किसान धर्मवीर ने एक और सफलता हासिल की है। अब लस्सी पीने के लिए न तो ताज़े दूध की जरूरत होगी और और न ही सीज़न की कमी खलेगी। चुटकी भर पाउडर से लजीज व नेचुरल स्वाद वाली लस्सी तैयार होगी और पोषक तत्व भी भरपूर मिलेंगे। इस अनोखी तकनीक की खोज किसी वैज्ञानिक या बड़ी प्रयोगशाला ने नहीं बल्कि गांव दामला के 10वीं पास किसान धर्मवीर ने की है। अपनी मेहनत और निरंतर प्रयोगों के बाद पशु-पालन विभाग के अधिकारियों और कृषि विज्ञान केन्द्र (के.वी.के.) के विशेषज्ञों की मौजूदगी में इस मशीन का परीक्षण किया गया, जो पूरी तरह सफल रहा। किसान धर्मवीर के अनुसार मशीन से तैयार लस्सी पाउडर अब उन क्षेत्रों तक भी पहुंचाया जा सकेगा, जहां ताजी लस्सी की उपलब्धता नहीं है। खासतौर पर ऑफ सीज़न में जब दूध और लस्सी की कमी महसूस होती है, तो ये तकनीक बेहद उपयोगी साबित होगी। इसके माध्यम से 1 क्विंटल लस्सी से करीब 12 किलो पाउडर तैयार किया जा सकता है। करीब ढाई लाख रुपये की लागत से तैयार इस मशीन को धर्मवीर ने मल्टीपर्पज रूपमें डिज़ाइन किया है। उनका कहना है कि इस मशीन के जरिए केवल लस्सी पाउडर ही नहीं, बल्कि अन्य कई तरह के दुग्ध और कृषि उत्पाद भी तैयार किए जा सकते हैं।

कई देशों में जा चुकी मशीन

धर्मवीर की यह उपलब्धि कोई पहली नहीं है। वर्ष 1996 में औषधीय फसलों की खेती शुरू करने वाले किसान धर्मवीर द्वारा तैयार की गई मल्टीपर्पज प्रोसैसिंग मशीन का विदेशों में भी ढंका बज रहा है। भारत के अलावा नाइजीरिया, युगांडा, कीनिया, जिंबाब्वे, अमेरिका, इथोपिया, नेपाल और बांग्लादेश जैसे 8 देशों में इनकी मशीनें उपयोग की जा रही हैं। धर्मवीर ने 2006 में अपनी पहली मशीन तैयार की थी।

ये उपलब्धियां हासिल कीं

कृषि जगत में उत्कृष्ट कार्य करने पर 2009 में तत्कालीन राष्ट्रपति प्रतिभा पाटिल और 2010 में तत्कालीन केन्द्रीय कृषि मंत्री शरद पवार ने किसान धर्मवीर को फार्मर साइंटिस्ट अवॉर्ड से सम्मानित किया। 2013 में फूड प्रोसैसिंग मशीन बनाने पर उन्हें प्रथम राष्ट्रीय पुरस्कार मिला। 2014 में वह 1 जुलाई से 30 जुलाई तक राष्ट्रपति के मेहमान भी रहे। 2015 में मल्टीपर्पज मशीन बनाने पर जिंबाब्वे के राष्ट्रपति राबर्ट मुगाबे ने उन्हें सम्मानित किया।

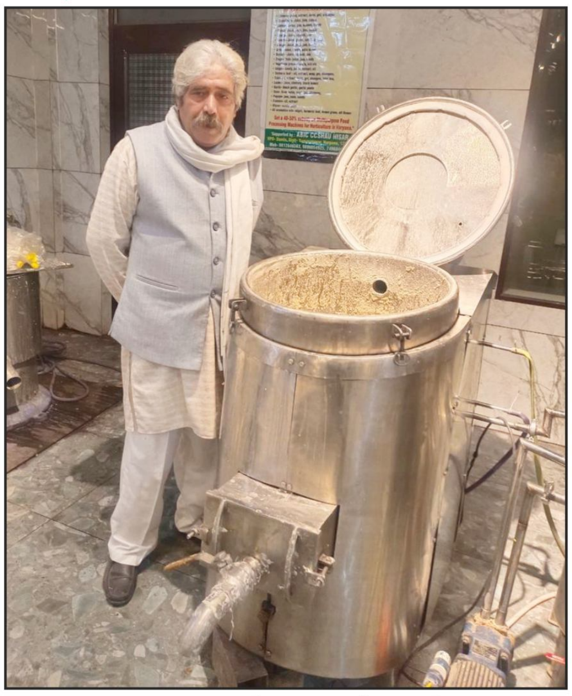

यमुनानगर के दामला में अपनी मल्टीपर्पज मशीन के साथ किसान धर्मवीर।

ओलावृष्टि की भीषण मार

देवास में 300 तोतों की मौत, किसानों की फसलें तबाह

मध्य प्रदेश के देवास जिले के हाटपीपल्या क्षेत्र में हाल ही में हुई भीषण ओलावृष्टि ने मानव जीवन, खेती और वन्यजीवन को एकसाथ प्रभावित किया। ग्राम पितावली में लगभग 300 तोते ओलों की मार से मारे गए, जिससे स्थानीय ग्रामीणों में शोक की लहर दौड़ गई। यह घटना प्राकृतिक आपदा की गंभीरता को उजागर करती है।

तोतों की दर्दनाक मौत

जानकारी के अनुसार, ग्राम पितावली में एक विशाल पेड़ पर तोते बड़े पैमाने पर बसे हुए थे। अचानक आई तेज ओलावृष्टि में ये पक्षी बच नहीं पाए और एक-एक कर उनकी मौत हो गई। अगली सुबह जब ग्रामीणों ने यह दारुण दृश्य देखा, तो उनकी आंखें नम हो गईं। गांव के अजय सिंह सेंधव ने बताया कि मृत तोतों की संख्या लगभग 300 के आसपास है। ग्रामीणों ने मानवीय संवेदना का परिचय देते हुए सभी मृत पक्षियों को इकट्ठा कर नजदीकी गड्ढे में दफन कर दिया। देवास रेंजर राजेश चौहान ने भी इस घटना की पुष्टि की।

किसानों की फसलें भी प्रभावित

ओलावृष्टि और तेज आंधी-बारिश का असर खेती पर भी पड़ा। ग्राम खजुरियाबीना सहित आसपास के गांवों में किसानों की फसलें बुरी तरह तबाह हो गई हैं। प्रशासन ने नुकसान का आकलन करने के लिए सर्वे दल भेजा, जिसमें पटवारी स्वीकार जैन, कृषि विस्तार अधिकारी मनोज कुमार मौर्य, पंचायत सचिव संतोष परमार और अन्य अधिकारी शामिल थे। प्रभावित किसानों ने 50,000 रुपये प्रति बीघा राहत राशि की मांग की है।

प्रशासन और ग्रामीणों का सहयोग

ग्रामीणों ने आपदा के बाद तुरंत राहत और बचाव कार्य शुरू किया। मृत तोतों को सुरक्षित तरीके से दफनाया गया और किसानों की फसल के नुकसान का आकलन किया जा रहा है। प्रशासन ने प्रभावित क्षेत्र में आगे भी मदद और राहत कार्य की योजना बनाई है।

यह घटना यह दर्शाती है कि प्राकृतिक आपदाएं न केवल मानव जीवन, बल्कि पशु-पक्षियों और कृषि पर भी गंभीर प्रभाव डालती हैं। विशेषज्ञों का कहना है कि मौसम के अचानक बदलने और ओलावृष्टि जैसी घटनाओं के कारण वन्यजीवन और कृषि को गंभीर नुकसान हो सकता है।